ଜହ୍ନମାମୁଁ

खादी वस्त्रों की लोकप्रियता दिनोंदिन बढ़ रही है। देश में 29 हजार से ज्यादा सहकारी समितियां खादी वस्त्रों की बिक्री के काम में संलग्न हैं।

खादी की बढ़ती लोकप्रियता से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों में बढ़ोतरी हो रही है। खादी और ग्रामोद्योग आयोग ने महात्मा गांधी की 125वीं जयंती के अवसर पर देश के 125 खंडों को अपनाने का फैसला किया है।

(लेख पृष्ठ 44 पर)

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। लघु कथाओं का भी स्वागत है। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है। 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

वर्ष 40 अंक 2 अग्रहायण-पौष 1916, दिसम्बर 1994

कार्यकारी संपादक : बलदेव सिंह मदान
उप संपादक : ललिता जोशी

उप निदेशक (उत्पादन) : एस.एम. चहल
विज्ञापन प्रबंधक : बैजनाथ राजभर
सहायक व्यापार व्यवस्थापक : पी० एन० बुलकुंडे
आवरण सज्जा : अलका नय्यर

एक प्रति : तीन रुपये   वार्षिक चंदा : 30 रुपये

फोटो साभार : रमेश चंद्र फोटो प्रभार, ग्रामीण विकास मंत्रालय एवं हेमंत कुमार उप्पल

इस अंक में

स्वच्छता–एक जीवन शैली	उत्तम भाई एच. पटेल	3
ग्रामीण स्वच्छता और नई टेक्नोलाजी	डा० कैलाश चन्द्र पपनै	6
ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम : दूर मंजिल, धीमी चाल	सुरेश सिंह	9
ग्रामीण स्वच्छता की समस्याएं	डा० मृत्युंजय उपाध्याय	11
ग्रामीण स्वच्छता जन भागीदारी से ही सम्भव	मदन मोहन	13
सामाजिक-आर्थिक विकास के परिप्रेक्ष्य में मानव मल की भूमिका	डा० अजय श्रीवास्तव एवं डा० हिमांशु शेखर	16
ग्रामीण स्वच्छता : समस्या और समाधान	यतीश मिश्र	20
कैसे बनाये सुलभ शौचालय?	डा० विजय कुमार उपाध्याय	23
सुनीता का सपना (कहानी)	रामदेव शुक्ल	25
सुनिश्चित रोजगार योजना	एस. पी. चौहान	28
ग्राम विकास और गांधी जी	डा० मदन केवलिया	32
ग्रामीण विकास में दूर-संचार सेवाओं की भूमिका	रेणु सिंह	36
जनसंख्या विस्फोट, विकास का अवरोध	वेद प्रकाश अरोड़ा	38
उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य शिक्षा का प्रसार	सैयद सलमान हैदर	42

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।
दूरभाष : 384888

पाठकों के विचार

'कुरुक्षेत्र' के सितम्बर अंक में ग्रामीण विकास में महिलाओं की भूमिका और भागीदारी पर जितनी सामग्रियां एक साथ प्रकाशित की गयी हैं, वे सभी पठनीय हैं और 'कुरुक्षेत्र' के इस अंक को पुस्तकीय महत्व प्रदान करती हैं।

डा. कुमार विमल,
पूर्व अध्यक्ष, बिहार लोक सेवा आयोग,
96, एम.आई. जी. एच.,
लोहिया नगर, पटना-800020

मुझे पहली बार कुरुक्षेत्र अगस्त 1994 का अंक पढ़ने को मिला। इसमें ''ग्रामीण अर्थ व्यवस्था में पशुपालन का योगदान'' में लेखक का विचार आर्थिक दृष्टिकोण से काफी सही व सटीक लगा। ग्रामीण क्षेत्रों में आज कृषि के साथ सहायक रूप में पशुपालन करके कृषक अपनी आमदनी के साथ ही साथ राष्ट्र को भी आर्थिक दृष्टिकोण से मजबूत करने में सहयोग दे सकते हैं। इस अंक में यह भी जानकारी दी गई है कि पर्वतीय क्षेत्रों में बेमौसम की सब्जी का उत्पादन करके किसानों की आमदनी में बढ़ोत्तरी की जा सकती है। आज कृषि को एक औद्योगिक इकाई मानकर कार्य करने पर ही इससे अधिक लाभ मिल सकता है। इसके 'साथ मादक पदार्थों का भयावह संकट' लेख भी आज के समाज में नशे के बढ़ते प्रयोग को रोकने के लिए एक कदम है। आज नशे को युवा वर्ग एक फैशन बनाकर कई प्रकार से इसका सेवन कर अपना जीवन चौपट कर रहा है। आज सरकार और स्वयंसेवी संस्थाओं को मिलकर एक नशारहित समाज बनाने के लिए प्रयास करने की जरूरत है। इन लेखों के अतिरिक्त पत्रिका में अन्य सभी लेख भी ज्ञानवर्धक तथा जानकारी से ओत-प्रोत हैं।

अनिल कुमार राय,
ग्राम-विशुनपुर चिरकिहवां,
जिला-देवरिया
पोस्ट-मदरापाली भरथराय,
उत्तर प्रदेश-274405

ग्रामीण विकास मंत्रालय की मुख्य पत्रिका 'कुरुक्षेत्र' का जुलाई, 94 अंक पढ़ा। इस अंक में अधिकेश राय द्वारा लिखित ''आदिवासी अर्थ व्यवस्था-विशेषताएं और समस्याएं'' नामक लेख हृदय विदारक लगा। ग्रामीण अर्थ व्यवस्था में आदिवासियों की स्थिति के बारे में पढ़कर बहुत दुःख हुआ। आज जहां हम विकास की ऊंची-ऊंची बातें करते हैं वहीं हमारी आबादी का एक बड़ा हिस्सा (6 करोड़ आदिवासी) गुमनामी के अंधेरे में रह रहा है। उनकी आर्थिक व सामाजिक स्थिति के बारे में पढ़कर बहुत दुःख हुआ। लेखक का सुझाव सराहनीय है कि इनके विकास के लिए इन्हें राष्ट्रीय विचारधारा से जोड़ा जाना आवश्यक है।

भारतीय प्रशासनिक सेवा में 'लोक प्रशासन' विषय के परीक्षार्थियों के लिए 'कुरुक्षेत्र' पत्रिका पढ़ना उपयोगी सिद्ध होगा।

प्रकाश चन्द्र इजराल,
सी-185, पाण्डव नगर,
पटपड़ गंज रोड, दिल्ली-92

''कुरुक्षेत्र'' की नियमित पाठिका हूं। अगस्त अंक अत्यधिक जानकारी परक प्रतीत हुआ। दरअसल यह तो सर्वमान्य तथ्य है ही कि ग्राम प्रधान देश होने के कारण ग्राम विकास से ही हमारे राष्ट्र की वास्तविक प्रगति और आंतरिक विकास संभव है। इस दृष्टि से यह एक उल्लेखनीय प्रकाशन है।

संदर्भित अंक में ग्राम संबंधी राव सरकार की उपलब्धियां सरकार की सकारात्मक मंशा को दर्शाती हैं। वैदिक काल से ही भारतीय अर्थ व्यवस्था की रीढ़ पशुपालन रही है। पशुपालन को व्यवस्थित, व्यापक और समुन्नत करके निश्चित ही भारतीय अर्थ व्यवस्था को विकसित रूप दिया जा सकना संभव है। आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीणों को इस परिप्रेक्ष्य में आवश्यक तथ्यों और जानकारियों से परिचित कराया जाए। इस हेतु एक योजनाबद्ध तरीके से एक कार्यक्रम चलाए जाने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

श्रीमती नीलम खरे
कबीर चौक, मंडला (म.प्र.)

जुलाई, 1994 का अंक मिला। पंचायती राज व्यवस्था के बारे

(शेष पृष्ठ 41 पर)

स्वच्छता-एक जीवन शैली

✍ उत्तम भाई एच. पटेल
ग्रामीण विकास राज्य मंत्री

रा आदर्श गांव अभी भी मात्र मेरी कल्पना ही है। वस्तुतः हर व्यक्ति की अपनी कुछ कल्पनाएं होती हैं। मेरे सपनों इस गांव में कोई भी ग्रामवासी आलसी नहीं होगा बल्कि वह गरूक होगा। वह पशुओं की भांति अंधकार और गन्दगी में हीं रहेगा। स्त्री-पुरुष सभी स्वतंत्र वातावरण में रहेंगे जो समूचे श्व का मुकाबला कर सकेंगे, जहां न प्लेग, न हैजा और न ही चक जैसी महामारी की आशंका होगी।

तिहासिक और सामाजिक पृष्ठभूमि

बेहतर सफाई से अच्छा स्वास्थ्य और रहन-सहन का उच्च र बनता है। "2000 ई. तक सभी को स्वास्थ्य सुविधाएं" पलब्ध कराने की राष्ट्र की वचनबद्धता को पूरा करना एक निवार्य घटक है। अनेक वर्षों से स्वच्छता को हमारे देश में और शेष रूप से गांवों में जन-आन्दोलन बनाने की ओर कम तरजीह गई है। स्वतन्त्रता से पूर्व गांवों में सफाई की स्थिति में सुधार रने के लिए बहुत कम प्रयास किये गए। वस्तुतः इस शताब्दी मध्य तक ग्रामीण क्षेत्रों में खुली जगह और सार्वजनिक भूमि सानी से उपलब्ध थी, इसलिए खुली जगह पर मल-मूत्र करने भी लोगों के रहन-सहन के लिए कोई गम्भीर समस्या नहीं बनी । सामाजिक चलन, रीति रिवाजों और आचरण-संहिता ने इस त के लिए बाध्य किया कि मानव मल-मूत्र को रिहाइशी स्थानों दूर डाला जाये ताकि किसी भी रूप में प्रदूषण न फैल सके। नसंख्या में वृद्धि, खेती, उद्योग, भवनों आदि के लिए जमीन के त्यधिक उपयोग और सामाजिक-आर्थिक स्थिति के कारण रानी प्रणाली को जारी रखना अब सुरक्षित नहीं माना जा रहा ।

स्वतन्त्रता के बाद हमारी सरकार ने हौदियों, खुली खात, ल्टी प्रणाली आदि के माध्यम से मानव मल-मूत्र के सुरक्षित पटान के प्रयास किए। अब इसमें फ्लश शौचालय, व्यक्तिगत र घरेलू जीवन में सफाई रखना, गन्दे पानी की निकासी, मल कासी आदि शामिल हो गए हैं। भारत में, छठी योजना तक , ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता सुधार हेतु क्रमबद्ध प्रयासों को उतना हत्व नहीं दिया गया जितना दिया जाना चाहिए था। वर्ष 1954 में भारत सरकार के स्वास्थ्य क्षेत्र में स्वच्छता कार्यक्रम लागू किया गया था। यह कार्यक्रम स्वास्थ्य मंत्रालय से निर्माण एवं आवास मंत्रालय में अन्तरित कर दिया गया था। 1981 में एक दस वर्षीय कार्यक्रम शुरू किया गया था और 1985 में ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम शहरी विकास मंत्रालय से ग्रामीण विकास विभाग को अन्तरित कर दिया गया था।

1986 से प्रगति

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम तथा इन्दिरा आवास योजना के अन्तर्गत ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम 1986 में शुरू किया गया था। केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम भी 1986 में ही शुरू किया गया था। सरकार द्वारा प्रायोजित कार्यक्रमों के अलावा, गैर सरकारी तौर पर बड़ी संख्या में स्वच्छता शौचालयों का निर्माण किया गया। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण ने सर्वेक्षण के अपने 44वें दौर (1988-89) में यह दर्शाया है कि केवल 10.96 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों को स्वच्छता सुविधाएं उपलब्ध हैं। केन्द्र द्वारा प्रायोजित ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम हेतु दिशा-निर्देश मार्च 1993 में संशोधित किए गए। नए दिशा निर्देशों में महिलाओं के लिए अलग ग्राम स्वच्छता परिसरों की स्थापना और स्वच्छता बाजारों की व्यवस्था के अतिरिक्त गरीबी की रेखा से नीचे बसर करने वाले लोगों के लिए अलग-अलग पारिवारिक शौचालयों के निर्माण की व्यवस्था है। कार्यक्रम के अंतर्गत शुष्क शौचालयों को कम लागत वाले स्वच्छता शौचालयों में बदलने को प्राथमिकता दी जा रही है। आठवीं योजना अवधि के दौरान 674.23 करोड़ रुपये की कुल राशि ग्रामीण विकास मंत्रालय के ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के लिए आबंटित की गई है। केन्द्रीय प्रायोजित ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के तहत 380 करोड़ रुपये और राज्य क्षेत्र के न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत 294.23 करोड़ रुपये आवंटित किए गए। 1992-93 और 1993-94 के दौरान गरीबी की रेखा से नीचे बसर करने वाले लगभग 28.34 लाख लोगों को इससे लाभ हुआ और 1994-95 के दौरान 29.82 लाख और लोगों को लाभ मिलने की संभावना है। 1995-96 और 1996-97 में लाभार्थियों की संख्या काफी अधिक होगी क्योंकि केन्द्र और राज्य क्षेत्र में वित्तीय

परिव्ययों को जवाहर रोजगार योजना, इंदिरा आवास योजना, विशेष रूप से यूनीसेफ, विश्व बैंक की सहायता से द्विपक्षीय/बहुदेशीय सहायता प्राप्त परियोजनाओं और अन्य राज्य क्षेत्र योजनाओं के अंतर्गत पर्याप्त सुनियोजित किया जा रहा है और उपरोक्त योजनाओं के अतिरिक्त गैर सरकारी तौर पर कार्य किया जाएगा।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान प्रगति में तेजी लाने के लिए उद्देश्य, प्राथमिकताएं और कार्य-प्रणाली निम्नानुसार है :

योजना के उद्देश्य

- ग्रामीण जनसंख्या की कवरेज में वृद्धि करना विशेष रूप से गरीबी की रेखा से नीचे के लोगों को स्वच्छता सुविधाएं मुहैया कराना और गन्दे पानी से पैदा होने वाली बीमारियों और गन्दगी से पैदा होने वाली बीमारियों को कम करना।
- जागरूकता पैदा करके और स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से महसूस की गई आवश्यकता का सृजन।
- ग्रामीण क्षेत्र में सभी शुष्क शौचालयों को स्वच्छ शौचालयों में बदलना और सिर पर मैला ढोने की प्रथा का उन्मूलन करना।
- उपर्युक्त उद्देश्यों के अनुकूल समुचित लागत प्रणाली तथा उपयुक्त प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देना।

प्राथमिकताएं

- शुष्क शौचालयों को स्वच्छ शौचालयों में बदलना।
- गरीबी की रेखा से नीचे बसर कर रहे लोगों के लिए व्यक्तिगत घरेलू शौचालय।
- जहां-कहीं आवश्यक हो, महिलाओं के लिए विशेष स्वच्छता परिसर।
- अन्य सफाई सुविधाएं-नालियां, सड़कें, कूड़ेदान/सोख्ते गड्ढे आदि।
- स्वच्छता बाजार (सफाई सामग्री के लिए खुदरा बाजार।)

कार्य-नीति

- केवल गरीबी रेखा से नीचे बसर कर रहे लोगों को सब्सिडी।
- अन्य परिवारों को इन सुविधाओं का लाभ स्वच्छता बाजारों की मार्फत उठाने के लिए प्रोत्साहित करना।
- महिलाओं को प्रशिक्षण–मानव संसाधन विकास।
- क्षेत्र के लिए अनुसंधान और विकास–विशिष्ट नमूने।
- स्थानीय तौर पर उपयुक्त-स्वीकार्य/वहन किए जा सक वाले माडल।
- मांग सृजन के लिए 10 प्रतिशत निधियां स्वास्थ्य शिक्षा व लिए निर्धारित करना।
- गैर-सरकारी संगठनों/ स्वयंसेवी संस्थाओं का अधिव योगदान।

ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम को पुनः लोक अभिमुखीकरण करने की जरूरत है। सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के समान ही यह भी लोगों का कार्यक्रम होना चाहिए। सहायता को धीरे-धीरे कम किया जाएगा और उत्प्रेरणा, जनजागृति अभियान, स्वास्थ्य संबंधी शिक्षा, मांग सृजन पर अधिक बल दिया जाएगा। इसी वजह से नई कार्यनीति के तहत 80 प्रतिशत सहायता गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों के लिए ही सीमित कर दी गई है।

सरकार ने दो विशेषज्ञ समितियां गठित की हैं, एक समिति का उद्देश्य घरेलू शौचालयों को आसानी से स्वीकार्य बनाने के लिए प्रौद्योगिकीय विकल्पों हेतु दिशा-निर्देश तैयार करना है और दूसरी समिति का उद्देश्य गैर-सरकारी संगठनों/स्वयंसेवी संगठनों के व्यापक योगदान अनुभूत की जा सकने वाली आवश्यकताओं का सृजन करना और इसके जरिये स्वैच्छिक कार्यों की मार्फत स्व-वित्तपोषण वाली योजनाओं के कार्यान्वियन हेतु दिशा निर्देश तैयार करना है। समितियों द्वारा शीघ्र ही अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने की संभावना है।

संपूर्ण कवरेज की नीति अपनाना आवश्यक है और इस कवरेज में गांव को मूल इकाई के रूप में माना जाना चाहिए राज्यों के स्वयंसेवी संगठनों को बढ़ावा देने की स्पष्ट नीति होनी चाहिए। तकनीकी अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों, पॉलिटैक्नीकों सहित प्राथमिक विद्यालयों से लेकर माध्यमिक विद्यालयों और कॉलेजों के पाठ्यक्रमों और पाठ्य-पुस्तकों में ग्रामीण स्वच्छता की अवधारणा भी शामिल की जानी चाहिए। सरकार भी ग्रामीण क्षेत्रों के स्कूलों में स्वच्छ शौचालय उपलब्ध कराने के कार्यक्रम को प्राथमिकता देगी ताकि छात्रों में स्वच्छता की आदत डाली जा सके। पंचायती राज संस्था इस कल्याणकारी कार्यक्रम में पूरी तरह से

ामिल होगी ताकि हम उस लक्ष्य को प्राप्त कर सकें जैसा कि मारे महान नेता जवाहरलाल नेहरू ने कहा था "जिस दिन हमारे भी देशवासियों को शौचालय सुविधाएं मिल जायेंगी उस दिन ां समझूंगा कि हमारा देश प्रगति की पराकाष्ठा पर पहुंच गया ।"

वर्तमान प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव ने भी आठवीं योजना के योजना परिव्यय में वृद्धि कर इस कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता दी है। मुझे आशा है कि इन समस्त प्रयासों से स्वच्छता सुविधाओं में वृद्धि होगी जिनसे वर्तमान योजना अवधि के अंत तक 25 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या लाभान्वित होगी।

केन्द्रीय ग्रामीण सफाई कार्यक्रम से लगभग 30 लाख लोगों को लाभ

केन्द्रीय ग्रामीण सफाई कार्यक्रम से इस वर्ष 29 लाख 82 हजार व्यक्ति लाभान्वित होंगे। इस कार्यक्रम के अंतर्गत गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों को निजी सेनिटिरी शौचालयों के निर्माण के लिए सब्सिडी दी जाती है। इस कार्यक्रम के लिए 45 करोड़ 35 लाख रुपये का आवंटन किया गया है। यह राशि पिछले वर्ष के प्रावधान 22 करोड़ 50 लाख रुपये से दुगनी है।

इस बार मुख्य ज़ोर लाभार्थियों की भागीदारी पर दिया जा रहा है। यह कार्यक्रम गैर-सरकारी संगठनों और महिलाओं की भागीदारी को प्रोत्साहित कर रहा है। पिछले अनुभवों से यह देखा गया है कि स्वच्छ शौचालयों के उपयोग के लिए लोगों को प्रेरित करने की विशेष आवश्यकता है। लाभार्थियों से श्रम, नगद या वस्तु के रूप में योगदान पर बल दिया जा रहा है ताकि उन्हें महसूस हो कि जो भी संपत्ति बनाई जा रही है वह स्थानीय समुदाय की ही है।

कार्यक्रम के अंतर्गत आदर्श गांवों के विकास के लिए भी धनराशि उपलब्ध कराई जा रही है। आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, असम, उड़ीसा, हिमाचल प्रदेश और केरल राज्यों में सफाई सुविधाओं से युक्त आदर्श गांव निर्मित किए जाएंगे। महिलाओं के लिए स्वच्छता परिसरों के निर्माण को भी इस कार्यक्रम के अंतर्गत प्रोत्साहन दिया जाएगा। जारी की गई धनराशि का 10 प्रतिशत महिलाओं के लिए ग्राम परिसर के निर्माण पर खर्च किया जाएगा। उत्तर प्रदेश सरकार ने महिलाओं के लिए 307 स्वच्छता परिसरों का निर्माण किया है, जबकि जम्मू और कश्मीर सरकार ने ऐसे तीन परिसर बनाए हैं। आंध्र प्रदेश सरकार इस वर्ष ऐसे 128 स्वच्छता परिसरों का निर्माण करेगी।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

ग्रामीण स्वच्छता और नई टेक्नोलाजी

✍ डा. कैलाश चन्द्र पपनै
वरिष्ठ संवाददाता, ''दैनिक हिन्दुस्तान''

ग्रामीण स्वच्छता एक उपेक्षित विषय रहा है। देश की आजादी के 47 वर्षों बाद भी अधिकांश ग्रामीण जनता स्वच्छता कार्यक्रमों के लाभ से वंचित रही है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व तथा बाद के अनेक वर्षों में ग्रामीण स्वच्छता की अनदेखी की जाती रही। अब जबकि ग्रामीण स्वच्छता के उद्देश्य को महत्व मिलना शुरू हुआ है तो लक्ष्य निर्धारण के साथ ही उपयुक्त टेक्नोलाजी के इस्तेमाल की जरूरत भी अनुभव की जा रही है।

वास्तव में ग्रामीण स्वच्छता के वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति का काम बेहद चुनौतीपूर्ण है क्योंकि यह कार्यक्रम पिछले तमाम वर्षों में बेहद पिछड़ा हुआ रहा है। छठी पंचवर्षीय योजना के अंत तक भी सिर्फ 0.72 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या को स्वच्छता सुविधाएं सुलभ हो सकी थीं। सातवीं योजना के अंत (1990) में यह उपलब्धि बढ़कर 2.45 प्रतिशत हुई तथा बाद की दो वार्षिक योजनाओं के अंत में यह आंकड़ा बढ़कर 2.73 प्रतिशत हो सका। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (एन.एस.एस.) के 44वें दौर (जुलाई 1988-जून 1989) के अनुसार 10.96 प्रतिशत ग्रामीण जनता को स्वच्छता सुविधाएं सुलभ थीं। इसका अर्थ है सरकारी प्रयासों के अलावा निजी प्रयासों से इस दिशा में उल्लेखनीय प्रगति हुई। यह एक उत्साहवर्द्धक तथ्य है कि यदि निजी पहल को बढ़ावा दिया जाए तो ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम को गति दी जा सकती है। जरूरत है सरकारी प्रयासों से उचित माडल प्रस्तुत करने व तकनीकी सुविधाएं प्रदान करने की। आठवीं योजना की अवधि में राज्यों के न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत 294.23 करोड़ रुपये का तथा केन्द्र द्वारा प्रायोजित ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम (सी.आर.एस.पी.) के अन्तर्गत 380 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है। इस प्रकार से आठवीं योजना के अन्तर्गत कुल 674.23 करोड़ रुपये के परिव्यय द्वारा 3.37 करोड़ ग्रामीणों को स्वच्छता सुविधा प्रदान कर अकेले सरकारी प्रयासों से कुल ग्रामीण जनसंख्या के पांच प्रतिशत हिस्से को स्वच्छता कार्यक्रम के दायरे में समेटना संभव हो सकेगा। इससे निजी प्रयासों को जो प्रोत्साहन मिलेगा उससे ग्रामीण जनसंख्या के और भी बड़े हिस्से के लाभाविन्त होने की आशा की जा सकती है। आठवीं योजना के लगभग 674 करोड़ रुपये की तुलना में सातवीं योजना में आबंटित राशि सिर्फ 180.63 करोड़ रुपये थी।

ग्रामीण स्वच्छता के बारे में आठवीं पंचवर्षीय योजना [cut off] उद्देश्य, कार्यनीतियां और कार्यक्रम पहले की विफलताओं [cut off] ध्यान में रखकर तैयार किए गए हैं। पहले की जो विफलताएं साम[cut off] आई वे हैं–ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के नाम पर मुख्य रूप [cut off] शौचालयों का निर्माण किया जाता रहा। सम्पूर्ण पर्यावरण [cut off] स्वच्छता की अवधारणा तो जैसे अस्तित्व में ही नहीं थी। प्राथमि[cut off] स्वास्थ्य सेवाओं, जल की उपलब्धि, निरक्षरता उन्मूलन, महि[cut off] कल्याण जैसे कार्यक्रमों से ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम को असम्ब[cut off] रखा गया जबकि आवश्यकता इस बात की थी कि ग्रामी[cut off] स्वच्छता कार्यक्रम को सिर्फ शौचालयों के निर्माण के रूप में [cut off] लेकर सेवाओं के सम्मुचय के रूप में लिया जाता। सभी स्तरों [cut off] पहल करने की भावना के अभाव, अपर्याप्त वित्तीय संसाधन[cut off] लोगों में स्वच्छता के महत्व को न समझने व भागीदारी की भाव[cut off] न होने के कारण भी स्वच्छता कार्यक्रमों की प्रगति की रफ्त[cut off] धीमी रही।

स्वच्छता, जल आपूर्ति और स्वास्थ्य के बीच गहरा पारस्परि[cut off] सम्बन्ध है। स्वच्छता बड़ी सीमा तक जल की उपलब्धता [cut off] आश्रित होती है। जल की शुद्धता व स्वच्छता पर लोगों का स्वास्[cut off] निर्भर करता है। परन्तु दुर्भाग्यवश देश में जल आपूर्ति व स्वच्छ[cut off] प्रणाली उपेक्षित रही। एक तरफ संसाधनों की कमी रही है औ[cut off] दूसरी तरफ चुनौतियों का अम्बार है। मल और गंदे जल के उपच[cut off] की सुविधाओं के अभाव में प्रदूषक तत्व भूमि के नीचे जल [cut off] मिल जाते हैं और उसे प्रदूषित करते हैं। इसी अनुपचारित ज[cut off] से जल के स्रोत नदियां आदि भी प्रदूषित होती हैं।

वैज्ञानिक पड़ताल से इस बात की पुष्टि हुई है कि भारत औ[cut off] अन्य विकासशील देशों में निजी स्वच्छता तथा खान-पान संबं[cut off] सावधानियों का अभाव कई घातक बीमारियों का कारण रहे है[cut off] अनुमान है कि 1.70 लाख बच्चे पोलियो से ग्रस्त हैं तथा प्रतिव[cut off] 2.5 लाख बच्चों की टिटनस तथा 15 लाख बच्चों की पेचिश त[cut off] पानी की कमी के कारण मृत्यु हो जाती है। बच्चों की उच्च मृ[cut off] दर का कारण मुख्य रूप से स्वच्छता का अभाव है। पर्याप्त स्व[cut off] जल का अभाव, मानव मल-मूत्र का उचित निपटान न होने त[cut off] ठोस और तरल कूड़े के पड़े रहने का पर्यावरण पर बुरा असर पड़[cut off]

है जो अनेक बीमारियों को जन्म देता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता के लिए टेक्नोलाजी के इस्तेमाल का मुद्दा भी अनेक वर्षों तक विषय सूची से बाहर ही रहा।जल आपूर्ति व स्वच्छता राज्य सूची के विषय हैं। अधिकांश राज्य सरकारों ने इनकी तरफ ध्यान ही नहीं दिया। केन्द्र सरकार ने सन् 1954 में पहली बार समाज कल्याण के क्षेत्र में राष्ट्रीय जल आपूर्ति व स्वच्छता कार्यक्रम की शुरूआत की। इसके अन्तर्गत राज्य सरकारों ने भी कदम उठाए और पेयजल और स्वच्छता की समस्या को देखते हुए जन स्वास्थ्य इंजीनियरी विभागों की स्थापना की गई।

धीरे-धीरे स्वच्छता की संकल्पना में भी बदलाव आया है। पहले ग्रामीण क्षेत्र में स्वच्छता गड्ढे के रूप में शौचालय, खुली खाइयों और हौदियों के उपयोग तथा बाल्टी प्रणाली द्वारा मल-मूत्र साफ करने तक सीमित थी। अब स्वच्छता की संकल्पना की व्यापक परिधि में तरल और ठोस कूड़े-करकट को साफ रखने, पर्यावरण में सुधार और खान-पान की स्वच्छता भी शामिल है।

ग्रामीण स्वच्छता की चुनौती का सामना करने के लिए पहला प्रत्यक्ष उपाय नवम्बर 1986 में किया गया जबकि केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम की शुरूआत की गई। इससे पहले उठाए गए कदम मुख्यतः जल आपूर्ति के क्षेत्र में थे। सन् 1972-73 में समस्याग्रस्त गांवों को पेयजल सुलभ करवाने के लिए त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम शुरू किया गया। इसकी सफलता के लिए राज्यों तथा संघ शासित क्षेत्रों को शत प्रतिशत अनुदान भी दिया गया। यह कार्यक्रम वर्ष 1973-74 तक जारी रहा। जब पांचवी योजना की शुरूआत के साथ 1974-75 में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम की शुरूआत भी की गई तो त्वरित जल आपूर्ति कार्यक्रम को बंद कर दिया गया। परन्तु जब 1977-78 में पाया गया कि ग्रामीण स्वास्थ्य व ग्रामीण जल आपूर्ति को न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम में शामिल करने के बावजूद समस्याग्रस्त गांवों में पेयजल आपूर्ति वांछित प्रगति नहीं कर रही है तो जल आपूर्ति प्रयासों में मदद के लिए त्वरित जल आपूर्ति कार्यक्रम को पुनः शुरू किया गया। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रमों के अन्तर्गत ग्रामीण स्वच्छता का कार्यक्रम एक अलग विषय के रूप में शामिल नहीं किया गया था। जब वर्ष 1985 में ग्रामीण जल आपूर्ति और ग्रामीण स्वच्छता विषय को शहरी विकास मंत्रालय से ग्रामीण विकास विभाग को हस्तांतरित कर दिया गया तो उसके बाद 1986 में ग्रामीण विकास मंत्रालय को स्वच्छ शौचालयों के निर्माण कार्यक्रम के संचालन का दायित्व सौंपा गया। वर्ष 1981 में प्रारम्भ हुए अन्तर्राष्ट्रीय पेयजल आपूर्ति और स्वच्छता दशक के अंतर्गत पेयजल आपूर्ति के क्षेत्र में तो अच्छी प्रगति रही परन्तु ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रमों की प्रगति संतोषजनक नहीं रही। इसी दशक के मध्य में शुरू की गई सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) में ग्रामीण स्वच्छता को एक अलग विषय के रूप में न्यूनतम स्वच्छता कार्यक्रम में शामिल किया गया। 1987-88 से ग्रामीण स्वच्छता को राज्यों के न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम का हिस्सा बनाया गया। सातवीं पंचवर्षीय योजना के उत्तरार्द्ध में संयुक्त राष्ट्र बाल विकास कोष (युनिसेफ) ने भी ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रमों के लिए मदद देनी शुरू की। तदनुसार आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, गुजरात, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु और महाराष्ट्र में कार्यक्रम शुरू किए गए।

ग्रामीण स्वच्छता के विभिन्न कार्यक्रमों के अन्तर्गत 1985-86 से 1992-93 के बीच लगभग 24.93 लाख शौचालयों का निर्माण किया गया। इसमें निजी प्रयासों से निर्मित शौचालयों की संख्या सम्मिलित नहीं है। केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों और जन जातियों तथा गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही आम जनता को स्वच्छ शौचालय उपलब्ध करवाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। वर्ष 1986 में इन्दिरा आवास योजना के तहत अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियों के आवासों के लिए दस लाख स्वच्छ शौचालयों का निर्माण करने तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के अन्तर्गत स्कूलों, उप-स्वास्थ्य केन्द्रों, पंचायत घरों व आंगनवाड़ियों आदि के लिए 2.5 लाख अतिरिक्त शौचालय उपलब्ध करवाने का कार्यक्रम शुरू किया गया।

आठवीं योजना के अन्तर्गत 33.70 लाख घरेलू शौचालयों के निर्माण की योजना है। योजना के पहले वर्ष में 2.30 लाख शौचालय बनाए गए। दूसरे वर्ष में 4.41 लाख शौचालय बनाने का लक्ष्य रखा गया। आठवीं योजना के अन्तर्गत शौचालय निर्माण के गहन कार्यक्रमों के अन्तर्गत ऐसे माडल विकसित करने की तरफ ध्यान दिया जा रहा है जो चुने हुए स्थानों की परिस्थितियों के अनुरूप हों। विभिन्न राज्यों में सुलभ शौचालय, सफाई विद्यालय, लोक शिक्षा परिषद तथा ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के शौचालय माडल सफलता के साथ काम कर रहे हैं। शौचालयों

के स्थानीय रूप से उपयुक्त और स्वीकार्य माडलों को प्रोत्साहन दिए जाने की कार्य नीति पर अमल किया जा रहा है। देश में जो अनेक प्रकार के शौचालय विद्यमान हैं उन्हें मिट्टी की स्थिति और जल उपलब्धता और लोगों की पसन्द के आधार पर विभिन्न स्थानों पर अपनाया जा सकता है।

स्वच्छता के क्षेत्र में नई प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल के मामले में आधुनिक यांत्रिकी के प्रयोग में देश के महानगर भी बहुत पीछे हैं। अतः ग्रामीण अंचल में जहां पर्याप्त सड़कें भी नहीं हैं, आधुनिक यंत्रों की बात सोची भी नहीं जा सकती। अतः टेक्नोलोजी की दृष्टि से स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप सामूहिक या व्यक्तिगत शौचालय माडल के चयन और उसके लिए उपयुक्त वित्तीय समर्थन जुटाना महत्वपूर्ण है। इसके अलावा स्वच्छता की संकल्पना को व्यापक बना कर शौचालय निर्माण तक ही सीमित न रखना भी जरूरी है। आठवीं योजना की रणनीति स्वच्छता की अवधारणा को एक समग्र योजना के रूप में पेश करती है ताकि स्थानीय जरूरतों के अनुरूप वैकल्पिक स्वच्छता प्रणाली लागू की जा सके। प्रायोगिक स्तर पर सफल परियोजनाओं के व्यापक प्रसार तथा लोगों की, विशेष रूप से महिलाओं की, भागीदारी पर जोर दिया गया है। महिलाओं के लिए विशेष स्वच्छता परिसर निर्मित करने का कार्यक्रम हैं। इनकी लागत में 30 प्रतिशत भागीदारी स्थानीय पंचायत की होगी तथा केन्द्र और सम्बद्ध राज्य सरकार की भागीदारी 35-35 प्रतिशत की होगी। गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों के लिए भी स्वच्छ शौचालयों के निर्माण और सूखे शौचालयों के परिवर्तन हेतु सरकारी सहायता में वृद्धि की गई है। अब लाभार्थी अथवा सम्बद्ध पंचायत का योगदान 20 प्रतिशत का होता है तथा केन्द्र सरकार और सम्बद्ध राज्य सरकार का योगदान 40-40 प्रतिशत होता है। आठवीं योजना के उद्देश्यों में स्वयंसेवी संगठनों और पंचायती राज संस्थाओं को शामिल करके जन जागरण और स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से स्वच्छता कार्यक्रमों को अपनाने की प्रेरणा देना भी शामिल है ताकि सरकारी सहायता पर आश्रित रहे बिना भी स्वच्छ शौचालयों का निर्माण होने लगे। ग्रामीण क्षेत्रों में मौजूद सभी शुष्क शौचालयों को कम लागत वाले स्वच्छ शौचालयों में बदल कर मैला ढोने की परम्परा को समाप्त करने का भी कार्यक्रम है। योजना के उद्देश्यों में स्वच्छता के समर्थन में प्रभावी लागत वाली उपयुक्त प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहन देना भी शामिल है। इसके अलावा नालियों, सोख्ता गड्ढों के निर्माण और ठोस तरल कूड़े के निपटान द्वारा गांव की पूर्ण स्वच्छता का कार्यक्रम लागू किया जाना है। यह सुझाव भी दिया गया है कि प्रत्येक राज्य प्रतिवर्ष समन्वित ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के अन्तर्गत स्वच्छ शौचालयों के निर्माण, सूखे शौचालयों के परिवर्तन, कूड़ादानों, सोख्ता गड्ढों, नालियों, गलियों के फुटपाथ बनाने, आंगनवाड़ियों, स्कूलों, पंचायत घर, स्वास्थ्य केन्द्रों में शौचालय बनाने, धुआं रहित चूल्हों, जलाश्यों व तालाबों की स्वच्छता, अन्य पेय जल स्रोतों के साथ नहाने और कपड़े धोने के चबूतरे, नालियों आदि की सुविधा वाला कम से कम एक आदर्श गांव विकसित करे। फिलहाल आंध्र प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश और जम्मू-कश्मीर की सरकारों ने इस पर अमल शुरू किया है तथा अन्य राज्य सरकारों से भी ऐसा ही करने को कहा गया है।

संयुक्त राष्ट्र बाल विकास कोष (यूनिसेफ) की मदद से पश्चिम बंगाल के मिदनापुर जिले में रामकृष्ण मिशन जैसे स्वयंसेवी संगठन के माध्यम से सैनिटरी मार्ट (स्वच्छता बाजार) की अवधारणा को प्रतिष्ठित किया गया है। ग्रामीण सैनिटरी मार्ट शौचालयों तथा अन्य स्वच्छता सुविधाओं के निर्माण के लिए आवश्यक सामग्री के बिक्री केन्द्र हैं। ये केन्द्र कम लागत वाली विभिन्न स्वच्छता सुविधाओं के डिजाइन और अनुमानित लागत की जानकारी तथा प्रशिक्षित कारीगरों की सूची भी रखते हैं। जहां गरीबी की रेखा के ऊपर वाले परिवार हैं और वे राजकीय वित्तीय सहायता की पात्रता नहीं रखते हैं वे सैनिटरी मार्ट सुविधा का लाभ उठा सकते हैं। जहां सैनिटरी मार्ट की स्थापना के लिए यूनिसेफ सहायता उपलब्ध नहीं है वहां स्वयंसेवी संगठनों या पंचायतों द्वारा सैनिटरी मार्ट की स्थापना कर यह महत्वपूर्ण सेवा सुलभ की जा सकती है। लोक कार्यक्रम तथा ग्रामीण प्रौद्योगिकी विकास परिषद (कापाट) भी इस दिशा में स्वयंसेवी संगठनों को प्रोत्साहित करने की भूमिका निभा सकती है ताकि उपयुक्त प्रौद्योगिकी के उपयोग को बढ़ावा मिल सके।

सी-2, प्रेस अपार्टमेन्ट्स,
23,पटपड़गंज, दिल्ली-110092

दूर मंजिल, धीमी चाल

✍ सुरेश सिंह

स्वाधीनता के पश्चात हमारे गांवों में स्वच्छता कार्यक्रमों का कार्यान्वयन काफी धीमी गति से हुआ है। इसके पीछे कोई एक ही कारण नहीं, बल्कि कई सामाजिक, आर्थिक एवं भौगोलिक कारण जिम्मेदार ठहराये जा सकते हैं। आजादी के शुरू के वर्षों में ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम की अवधारणा एक संकीर्ण दायरे में की जाती थी। इसका अर्थ मल-मूत्र की सफाई तक ही सीमित था। लेकिन आज कल स्वच्छता के बारे में एक व्यापक दृष्टिकोण का विकास हुआ है और इसमें अन्य बातें भी शामिल हो रही हैं। अब स्वच्छता के दायरे में कूड़े-करकट की साफ-सफाई, खान-पान की सफाई और निजी स्वास्थ्य की बातों का भी समावेश कर लिया गया है। भारत सरकार के स्वास्थ्य क्षेत्र में स्वच्छता कार्यक्रम की शुरूआत 1954 में की गई थी।

लोगों में दिलचस्पी का अभाव

सातवीं पंचवर्षीय योजना काल में केन्द्र प्रायोजित कार्यक्रमों के तहत ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रमों की अब तक की कुल उपलब्धि का लक्ष्य 25 प्रतिशत रखा तो गया था, लेकिन 1991-92 तक ये कार्यक्रम 2.73 प्रतिशत लोगों को ही लाभाविन्त कर पाए थे। नेशनल सेम्पुल सर्वे यानी भारत सरकार के राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण नामक विभाग ने अपने 44वें दौर के सर्वेक्षण से यह निष्कर्ष निकाला कि अभी तक देश के ग्रामीण क्षेत्रों के कुल 10.96 प्रतिशत लोगों को शौचालय सुविधा प्राप्त है। हालांकि इधर निजी प्रयासों से शौचालय सुविधा के सृजन की प्रवृत्ति काफी बढ़ी भी है, लेकिन अपर्याप्त धन, ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी कम मांग और शायद इन्हीं कारणों से कार्यान्वयन संस्थाओं द्वारा इसमें पूरी दिलचस्पी न लेने के फलस्वरूप ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम अभी तक कछुआ चाल से ही चल रहे हैं।

1991-92 तथा 1992-93 के दो वर्षों की अवधि में ग्रामीण क्षेत्रों में 35,218 सेनेट्री लैट्रीन यानी जल-प्रवाहित शौचालय तैयार किए गए। ऐसे शौचालयों की संख्या 2,62,391 थी जो राज्य सरकार के क्षेत्र में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत निर्मित करवाये गये। गांवों में साफ-सफाई के महत्व को स्वीकारते हुए 1992 में पहली बार एक राष्ट्रीय विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया। गोष्ठी ने इस मुद्दे से जुड़े कई महत्वपूर्ण विषयों पर विशेष जोर दिया। साफ-सफाई के मामले में समाज विज्ञानी पहलू को ही महत्वपूर्ण नहीं बताया गया बल्कि उपयुक्त प्रौद्योगिकी को अपनाने के अलावा उस में अनुसंधान और विकास पर भी बल दिया गया। संस्थागत क्षेत्र के सहयोग और मानव संसाधन के विकास की जरूरत पर भी इस राष्ट्रीय गोष्ठी ने काफी महत्व दिया। इसके अनुसार यह धारणा भी पुष्ट की गयी कि समुदाय की भागीदारी और महिलाओं की भूमिका स्वच्छता कार्यक्रम में काफी कुछ कर सकती है। यह कहा गया कि जब तक लोग इसमें सक्रिय भागीदारी नहीं करते या इस कार्यक्रम की सही अर्थों में मांग नहीं करते, तब तक इसमें शायद ही वांछित सफलता मिल सके।

नया ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम

सरकार ने इस दिशा में एक संशोधित केन्द्र प्रायोजित ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम शुरू किया है। इसके तहत गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करने वाले परिवारों के निजी शौचालयों पर आने वाले कुल खर्च का 80 प्रतिशत तक सरकार वहन करेगी। सब्सिडी की यह राशि केन्द्र सरकार और संबंधित राज्य सरकारें आधा-आधा उपलब्ध करायेंगी। शौचालय की सुविधा लेने वालों को अपने हिस्से का खर्च नकद या मजदूरी की शक्ल में देना होगा। संशोधित कार्यक्रम में एक और अच्छी बात यह है कि इसमें सूखे शौचालयों को प्राथमिकता के आधार पर सेनिट्री लेट्रीन में बदला जा सकेगा ताकि हाथ से मैला उठाने की प्रथा से छुटकारा दिलाया जा सके। साथ ही महिलाओं के लिए अलग शौचालय परिसर, सम्पूर्ण स्वच्छता के वास्ते नाली, गलियों में खड़ंजे, सोख्ता गड्ढे, घूरों के लिए गड्ढे और पेय जल स्रोत के इर्द-गिर्द सफाई के प्रावधान भी इसके अन्तर्गत किये गये हैं। राज्य सरकारों से यह अनुरोध

किया गया है कि वे समन्वित स्वच्छता कार्यक्रम के अंतर्गत कम से कम एक आदर्श ग्राम अवश्य विकसित करें।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत केन्द्र प्रायोजित स्वच्छता कार्यक्रम के लिए 3 अरब 80 करोड़ रुपये की कुल राशि निर्धारित की गई है। इसी अवधि में राज्यक्षेत्र के न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अंतर्गत 2 अरब 94 करोड़ 23 लाख रुपये व्यय किये जाएंगे। पिछले वित्त वर्ष में राज्यों को न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत 49 करोड़ 86 लाख रुपये और राज्य तथा स्वैच्छिक संस्थाओं को कापार्ट के जरिये 30 करोड़ रुपये की केन्द्रीय सहायता आबंटित की गई थी। चालू वित्त वर्ष में केन्द्र और राज्य के मिले-जुले खर्च से कुल 5 लाख शौचालयों के निर्माण की संभावना है। लेकिन इसे पर्याप्त नहीं कहा जा सकता।

शौच के लिए खुले में जाने की आदत

गांवों में आज भी स्वच्छता कार्यक्रमों को समुचित गंभीरता से नहीं लिया जा रहा है। ग्रामीण विकास मंत्रालय के तहत राजीव गांधी पेय जल मिशन ने पिछले साल एक शोधपूर्ण अध्ययन किया, जिसका विषय "भारत में ग्रामीण पेय जलापूर्ति एवं स्वच्छता कार्यक्रम" रखा गया था। इस अध्ययन में पाया गया कि गांवों में मल-व्ययन यानी शौच के पश्चात उसकी सफाई प्रकृति के ही भरोसे छोड़ दी जाती है। सर्वेक्षण में शामिल किए गए 92 प्रतिशत लोग घरों से बाहर खुले में ही शौच के लिए जाते हैं। हर 10 में से एक व्यक्ति पानी के स्रोत के निकट मल-त्याग के पक्ष में पाया गया। हालांकि इसके लिए एकान्त स्थान का महत्व लगभग सर्वसम्मति से व्यक्त किया गया। गांवों में जो लोग निजी शौचालयों का उपयोग करते हैं, उनमें राज्यवार स्थिति अलग-अलग देखने को मिलती है। राजस्थान में 30 प्रतिशत, केरल में 25 प्रतिशत और मध्य प्रदेश में 12 प्रतिशत ग्रामीण निजी सण्डासों का इस्तेमाल करते हैं। इस मामले में मणिपुर अद्वितीय रहा है, जहां 85 प्रतिशत लोग निजी शौचालयों का उपयोग कर रहे हैं। शौचालयों के उपयोग के मामले में सभी राज्यों का मिला-जुला औसत 8 प्रतिशत का ही आता है।

इस अध्ययन से और भी कई जानकारियां मिली हैं जो अलग-अलग जगहों के तौर-तरीकों पर प्रकाश डालती हैं। लगभग वे सभी लोग जो बाहर खुले में शौच जाते हैं वे अपने मल को न तो ढकते हैं और न ही किसी और तरीके से मल व्ययन करते हैं।

जहां तक पाखाना जाने के बाद हाथ धोने का सवाल है इसका रिवाज सर्वत्र पाया जाता है। 23 प्रतिशत लोग सिर्फ पानी से हाथ धो लेने को ही पर्याप्त मान लेते हैं। इसमें तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और मणिपुर के नाम सर्वाधिक उल्लेखनीय हैं। चौदह प्रतिशत ग्रामीण पाखाने के उपरान्त साबुन से हाथ धोते हैं जबकि छह प्रतिशत लोग मिट्टी या राख से हाथ धोते हैं। यह रिवाज उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश और पश्चिमी बंगाल में बहुतायत से है। साबुन का इस्तेमाल जहां हाल के ही वर्षों की देन है और यह युवा पीढ़ी, साक्षर तथा उच्च वर्ग की पद्धति कही जा सकती है, वहीं सिर्फ पानी से हाथ धोने की आदत गरीब परिवारों, अशिक्षितों एवं पुरातन विचारधारा के लोगों की विशेषता कही जा सकती है।

साफ-सफाई के प्रति जागरूकता का अभाव

जहां तक घर के कूड़े-कचरे और खरपतवार का सवाल है, 80 प्रतिशत ग्रामीण उसे घूरे में डालते हैं। भले ही सार्वजनिक हो या निजी। 18 प्रतिशत लोग खाद के गड्ढे में उसका निस्तारण करते हैं। घरों से निकलने वाले गन्दे पानी को 63 प्रतिशत परिवार सिर्फ बाहर बहने के लिए यों ही छोड़ देते हैं। 5 प्रतिशत लोग सोख्ता गड्ढों का इस्तेमाल करते हैं और 12 प्रतिशत लोग नाली के गन्दे पानी को अपने किचन-गार्डन में खपा लेते हैं।

ग्रामीण अंचलों में शारीरिक साफ-सफाई के प्रति पर्याप्त जागरूकता देखने को तो मिलती है पर व्यावहारिक जीवन में इस पर ध्यान नहीं दिया जाता। इस मामले में सार्वजनिक सुविधाओं की अपर्याप्तता तथा परिवारों की खस्ता आर्थिक-स्थिति विशेष रूप से जिम्मेदार है। लोगों को स्वास्थ्य-शिक्षा और प्रेरणा की बड़ी जरूरत है। दैनिक स्नान का महत्व समझते हुए और चाहते हुए भी लोग नित्य स्नान कर नहीं पाते। ग्रामीण भारत का आधे से ज्यादा जन-समुदाय दो-चार दिन में एक बार स्नान करता है। राजस्थान के बाड़मेर जैसे जलाभाव वाले क्षेत्रों में तो महीने में औसतन दो बार ही नहाने की नौबत आ पाती है। नहा कर साफ सुथरे कपड़े पहनना चाहते तो अधिकांश लोग हैं, लेकिन यह बहुधा संभव नहीं हो पाता। जूतों का इस्तेमाल यदा-कदा ही होता है। ऐसा तब हो पाता है, जब लोग किसी आवश्यकता से गांव के बाहर निकलते हैं या शादी-विवाह या मेला-ठेला में भाग लेने जा रहे होते हैं। अलबत्ता, ग्रामीण महिला झाड़ू-बुहारू और लिपाई-पुताई द्वारा घर की सफाई दत्तचित्त होकर करती है। इसमें

(शेष पृष्ठ 19 पर)

ग्रामीण स्वच्छता की समस्याएं

डा० मृत्युंजय उपाध्याय

कहा जाता है कि जहां स्वच्छता है, वहां ईश्वर का वास है। गांधी जी स्वच्छता को ईश्वर का दूसरा नाम कहते थे। इसलिए कि स्वच्छ वातावरण में ही शरीर स्वच्छ रह सकता है। मन स्वस्थ रह सकता है और मनुष्य अपने तथा समाज के बारे में सोच सकता है। भारत की आत्मा भारत के सात लाख गांवों में वास करती है। ग्रामीण विकास से ही देश का विकास संभव है। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि ग्रामीण जीवन में स्वच्छता के नियमों का ईमानदारी से पालन किया जाए। गांवों में अधिकांश बीमारियों का कारण स्वच्छता का अभाव है।

स्वच्छता के अध्ययन को दो भागों में बांटा जा सकता है। वातावरण या परिवेश की स्वच्छता तथा शरीर की स्वच्छता।

वातवारण की स्वच्छता

वातावरण की गंदगी के कारण रोगों का जन्म होता है। ग्रामीण जीवन में कई समस्याएं हैं :- (क) शौचालयों का अभाव (ख) कूड़ेदानों का अभाव (ग) लोगों की बुरी आदतें—जहां-तहां थूकना, इधर-उधर मल-मूत्र विसर्जन (घ) पेड़ों को लगाने की बजाए काटना (च) स्वच्छता के बारे में उनकी गलत धारणा (छ) मवेशियों को अलग रखने के स्थान का अभाव (ज) अशिक्षा और पिछड़ापन।

इन सभी समस्याओं का समाधान किया जा सकता है बशर्ते लोगों में जागरूकता लाई जाए। इसके लिए उन्हें स्वच्छता के नियम समझाए जाने चाहिए। स्वास्थ्य रक्षक गांवों में जाकर सफाई कार्य में जुटें। वहां की पंचायत के कुछ युवक उनका साथ देकर गांव में काम करके दिखाएं। सफाई के नियमों का पालन करके सबके सामने एक आदर्श रखना है।

ग्रामीण आसपास के खेतों में शौच करने की बजाय घर से सटी हुई जमीन में एक अस्थाई शौचालय बनाएं। एक मीटर लम्बा एक मीटर चौड़ा, डेढ मीटर गहरा गड्ढा खोद कर उस पर लकड़ी का तख्ता डाल दें और उसके चारों ओर टाट, पुआल या बांस से एक घेरा डाल दें। प्रत्येक व्यक्ति शौच के बाद एक मुट्ठी मिट्टी उसमें डालता जाएगा। जब वह गड्ढा लगभग भर जाए तो फिर कुछ दूरी पर वैसा ही गड्ढा बना लें। फिर उसी घेरे को उठाकर वहां लगा दें। 90 दिनों के बाद गड्ढे को खोदकर खाद निकाल लें जिसका उपयोग खेतों में किया जा सकता है।

यदि घर के बाहर मैदान में या खेत में शौच के लिए जाना पड़े तो ध्यान रखना चाहिए कि कभी मल को खुला न छोड़ें। इसको खाद में बदलने तथा वातावरण को स्वच्छ रखने के लिए दो उपाय हैं :- (क) छोटा सा गड्ढा बनाकर मल-त्याग कर फिर उसी मिट्टी से उसे पूरा ढक दें (ख) साथ में मिट्टी रखें या कहीं से उठाकर मल को ढक दें।

मवेशियों को यथासंभव घर से बाहर गुहाल में बांधे। परंतु उनकी सफाई का पूरा प्रबंध करना चाहिए। गुहाल के पास जगह हो तो 1.2 मीटर लम्बा, 1.2 मीटर चौड़ा और 1.2 मीटर गहरा गड्ढा खोद लें और उसी में गोबर, बचा खुचा चारा, सब्जी के पत्ते, डंढल, घर का कूड़ा-कचरा डालते जाएं। बीच-बीच में थोड़े-थोड़े पानी का छिड़काव करते रहें। गड्ढा भर जाए तो वहां निशान लगा दें जिससे भविष्य में खाद निकाली जा सके और मिट्टी से ढक दें। 90-100 दिनों के भीतर कम्पोस्ट खाद बनकर तैयार हो जाएगी। खाद निकालिए और गड्ढे का फिर उपयोग कीजिए।

लकड़ी जलाने की बजाय गोबर गैस का उपयोग करना चाहिए। प्रखंड विकास कार्यालय में गोबर गैस के लिए ऋण देने का प्रावधान है। गोबर का उपयोग दो प्रकार से किया जा सकता है (1) गैस के रूप में (2) खाद के रूप में।

आंगन में घर के आसपास (गमले में भी) पौधे लगाने चाहिए। तुलसी, नीम, अमरूद, केला, पपीता आदि। कुछ पौधे मौसमी और कुछ स्थायी। इससे तीन लाभ होंगे (क) पर्यावरण से पर्याप्त आक्सीजन मिलेगी, (ख) प्रदूषण कम होगा (ग) आर्थिक लाभ होगा और ग्रामीणों की सृजनशीलता को बढ़ावा मिलेगा।

सफाई रखने और ऐसा वातावरण बनाने की आदत डालनी होगी। इसके लिए उत्साह और जागरूकता चाहिए।

आंगन, सड़कों, कुओं, नालों की सफाई

सड़क चाहे कच्ची हो पर उस पर समुचित ढाल रहे तो बरसात का पानी नहीं जम पाता। सड़क के दोनों ओर नाली की व्यवस्था हो। पक्की मिट्टी की नाली का उपयोग लाभदायक और सस्ता होगा। सड़क के किनारे पीपल, नीम, ताड़, बरगद के वृक्ष लगाने चाहिए। इससे स्वच्छता व सुन्दरता का एक साथ प्रबंध होगा।

कुएं को कच्चा नहीं रहने दें। इसमें जगत का पानी, रिस-रिस कर जाता है और गंदा पानी फिर उपयोग में आता है। ईंट या मिट्टी के पाट से कुआं बनाएं और जगत एकदम साफ सुथरी हो। वहां तुलसी आदि के पौधे हों पर बड़े वृक्ष नहीं क्योंकि इसके पत्ते पानी को खराब करते हैं। फिर बीच-बीच में ब्लिचिंग पाउडर आदि डालकर पानी को स्वच्छ करना चाहिए।

आंगन को झाड़ बुहार कर गोबर से लीपना चाहिए। अमरीका में शोध हुआ है कि गोबर से लिपे स्थान पर रेडियोधर्मिता का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। घर की दीवारों पर चुने से पुताई की जा सकती है।

शरीर की स्वच्छता

स्वस्थ शरीर में रहता है स्वस्थ मन। स्वस्थ मन में बनती हैं विकास की बड़ी-बड़ी योजनाएं। माता-पिता बच्चे को स्वच्छ रहने की आदत डालें। प्रसिद्ध विचारक मेजिनी ने लिखा है—बच्चा नागरिकता का सर्वोत्तम पाठ माता के चुम्बन और पिता के प्यार के मध्य सीखता है। "सुबह उठकर कुल्ला करना, आंखे धोना, दांतुन से दांत साफ करके नाश्ता करना। अपने कपड़ों को साबुन या सोडे से साफ रखना। बच्चों को प्रतिरक्षक टीके लगवाना। विद्यालय में बच्चों को स्वच्छता के बारे में जानकारी दी जानी चाहिए। इसके लिए उन्हें वार्षिक उत्सव में पुरस्कृत कर उन्हें प्रोत्साहित किया जाए।

गांवों की चौपालों, पंचायत भवनों या किसी सार्वजनिक स्थान पर समय-समय पर सफ़ाई-सप्ताह मनाया जाए और उसमें स्वास्थ्य-निरीक्षक डॉक्टर, वैद्य बुलाए जाएं जो लोगों में स्वच्छता के प्रति जागरूकता पैदा करें। उन्हें रोगों के कारणों के पीछे गंदगी के प्रभाव के बारे में बताया जाए।

ग्रामीण स्वच्छता और महिलाओं की भूमिका

ग्रामीण जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी है महिलाओं का पिछड़ापन, अशिक्षा, अंध विश्वास। वे स्वयं नहीं जानती हैं कि स्वच्छता का अर्थ क्या है। सिर्फ खाना बनाकर रख देना और परोस कर खिला देना ही काफी नहीं है। प्रायः दाल, चावल, सब्जी या अन्य खाद्य पदार्थ बिना ढके रखे होते हैं। उस पर मक्खियां भिन-भिना रही होती हैं। यही खाना अतिसार, अपच, पीलिया आदि रोगों का कारण बनता है। उन्हें शिक्षित कर स्वच्छता का महत्व समझाना चाहिए।

अपना उत्तरदायित्व खुदपर

गांधी जी की 125वीं जयंती के अवसर पर यह कहना उचित होगा कि "तुम दुनिया के उद्धार का उत्तरदायित्व अपने सिरपर मत लो। तुम अपना ही काम ठीक से कर सको, यही बहुत है। इसी से सबका कल्याण होगा" (महात्मा गांधी की आत्मकथा) उन्हीं के स्वर में स्वर मिलाकर यह कहना व्यावहारिक व वांछनीय लगता है कि गांव का प्रत्येक व्यक्ति जगे। स्वच्छता के प्रति ईमानदार हो। सब स्वयं स्वच्छ रहें, देखा-देखी दूसरे भी स्वच्छ रहेंगे। फिर स्वच्छता कोई समस्या नहीं रहेगी। यह जीवन का स्वभाव बन जाएगी। तभी गांधी और विनोबा के गांवों में सुख, स्वास्थ्य और सौमनस्य का स्वर्ग उतर आएगा।

वृन्दावन, राजेन्द्र पथ,
धनबाद–826001, बिहार

कुरुक्षेत्र मंगाने का पताः

व्यापार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पटियाला हाऊस
नई दिल्ली-110001

ग्रामीण स्वच्छता जन भागीदारी से ही सम्भव

✍ मदन मोहन

भारत एक महान देश है, जिसकी अपनी परम्पराएं, दर्शन और संस्कृति है जिन पर हमें गर्व होना स्वाभाविक ही है। परन्तु यह बात समझ में नहीं आती है कि ग्रामीण भारत के लोग जो परम्परागत संस्कृति के उत्तराधिकारी हैं और अशिक्षित होते हुए भी विलक्षण बुद्धि के धनी हैं, उन्हें स्वच्छता की मूल अवधारणा की जानकारी क्यों नहीं है। वहां अभी तक शौचालयों की व्यवस्था नहीं है। इस कारण ग्रामीण स्वच्छता के कार्यक्रमों को चलाने में कठिनाई आती है। अतः मूल समस्या जागरूकता सृजन और ग्रामीण लोगों, विशेष रूप से महिलाओं, के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने की है।

हमारे देश में हर वर्ष 25 लाख बच्चे पेचिश के शिकार होते हैं, जिसे अपने आस-पास सफाई रखकर रोका जा सकता है। इसी प्रकार हजारों लोग गंदगी के कारण बीमार होकर अपनी शिक्षा, अपने स्वास्थ्य से हाथ धो बैठते हैं जिससे उनकी और उनके परिवार की आर्थिक स्थिति अस्त व्यस्त हो जाती है। गन्दगी के कारण लोग, जिनमें अधिकांश बच्चे हैं कीटाणुओं से फैलने वाले कई प्रकार के संक्रामक रोगों की चपेट में आ गए हैं जिससे उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। मानव मल-मूत्र भी हैजा, मियादी बुखार, अतिसार और ऐसी ही कई अन्य संक्रामक बीमारियों को जन्म देता है।

सदियों से स्त्री-पुरुष व बच्चे जंगलों, खेतों में अपने नित्यकर्म से निवृत्त होते आये हैं। यही हमारे गांवों की परम्परा है जो कि गन्दगी का कारण भी है। तेजी से बढ़ती जनसंख्या ने इसे और भी भयावह बना दिया है। महिलाओं के लिए एकान्त की कमी उनकी मान मर्यादा पर एक प्रश्नचिन्ह अंकित करती है।

सफाई और पीने का साफ पानी दोनों एक दूसरे से जुड़े हुए पहलू हैं। पेयजल पर 1980 से काफी पैसा लगाकर सभी को पानी मुहैया कराने के प्रयास किये गए हैं और जो बहुत हद तक सफल भी रहे हैं। परन्तु दूसरे पहलू अर्थात् सफाई की दिशा में उठाये गये नाम मात्र कदमों से स्वास्थ्य पर होने वाले लाभों का दायरा काफी सीमित रहा है। गन्दगी ही बीमारी का घर है; इसी से पर्यावरण को खतरा है और इसी से हमारी मान मर्यादा को ठेस पहुंचती है। दूसरी जटिल समस्याओं की तरह सफाई की कमी का भी इससे जुड़े मुद्दों को ध्यान में रखकर विश्लेषण किया जा सकता है।

एक ओर सरकार ने "2000 ई. तक सभी को स्वास्थ्य सुविधायें" उपलब्ध कराने की वचनबद्धता की है तो दूसरी ओर, सफाई के लिए जो वर्तमान प्रावधान और इसकी गति है उसके रहते सफाई से वंचित लोगों की संख्या में निकट भविष्य में भी कोई परिवर्तन होने की सम्भावना नहीं है। कितना दुर्भाग्य है कि इस मौलिक बुनियादी आवश्यकता की ओर हम ध्यान नहीं दे रहे हैं और ऐसा न कर पाने में हमारी असफलता के कारण असंख्य उत्पीड़ाएं मुंह बाये खड़ी हैं। फिर भी जो लोग स्वच्छता के इस कार्य में स्वयं को समर्पित किये हुए हैं वे स्वीकारते हैं कि या तो हम रास्ता भटके हुए हैं अथवा अभी तक उस ओर जाने की दिशा को ही नहीं जान सके हैं।

जब समस्या इतनी जटिल और गम्भीर है तो इस दिशा में प्रगति न कर पाने के कारण क्या हैं ? इन अवरोधों का अध्ययन करना भी उतना ही आवश्यक है जितना इस दिशा में कदम बढ़ाना।

इस गम्भीर विषय से निपटने के लिए राजनैतिक पहल की कमी है। राजनेताओं के पास ग्रामीण ढांचे में व्याप्त गन्दगी की ओर ध्यान देने की फुर्सत नहीं है क्योंकि वे ग्रामीणों को शायद उतना महत्वपूर्ण नहीं समझते हैं। इसलिए आज आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीण लोगों में ऐसी जागरूकता लाई जाए ताकि वे गंदगी के नारकीय वातावरण से निकलने के लिए स्वयं कमर कस सकें।

कम लागत वाली और आसानी से उपलब्ध स्वच्छता सुविधाओं और स्वास्थ्य सुधार के विभिन्न तरीकों को लेकर प्रचार अभियान शुरू किए जाने चाहिए। जिस प्रकार राष्ट्रीय एकता के प्रचार के लिए सभी भाषाओं, वर्गों और समुदायों के लोगों को लेकर प्रचार अभियान और विज्ञापन तैयार किये गये, सद्भावना दौड़ तथा सद्भावना यात्राएं आयोजित की गईं, क्या सफाई का प्रचार-प्रसार करने के लिए ऐसा नहीं किया जा सकता? परन्तु संपन्न वर्ग कम लागत वाले स्वच्छता साधनों से किनारा करते हैं क्योंकि उनकी नजर में कम लागत निम्न स्तर का द्योतक है।

स्वच्छता के लिए एक उपयुक्त वातावरण तैयार करने के लिए उत्तरदायी एजेन्सियां आमतौर पर निष्प्रभावी रही हैं और सभी स्तरों पर उनकी नीतियां सफलता हासिल नहीं कर सकीं हैं। इसमें स्वच्छता की कीमत पर जल सप्लाई की ओर अधिक ध्यान देना, भावना और सोच में दीर्घावधिक परिवर्तन की बजाय कम समय तक प्रभाव डालने वाली चीज़ों की ओर ध्यान देना और ऐसी सहायता देना शामिल है जिससे मध्यम आय वाले समुदायों को लाभ मिलता हो। वास्तविकता तो यह है कि इस समस्या के लिए प्रायः ऐसा कोई दार्शनिक दृष्टिकोण नहीं रहा है जिसके आधार पर कोई ठोस नीति अपनाई जा सके।

स्वच्छता ही अच्छे खिलाड़ियों की जननी है और इसी के बलबूते पर अनेकों युवाओं को खेलों के प्रति आकर्षित किया जा सकता है। सरकारी विभागों में उत्तरदायित्वों के बिखरे होने के कारण संस्थागत ढांचा "सर्वाधिक उपेक्षित वर्ग" की जरूरतों की अनदेखी करता रहा है। स्वयंसेवी संस्थाओं तथा निजी क्षेत्र की सशक्त भूमिका को कोई अहमियत नहीं दी गई। इसलिए विद्यमान संस्थागत ढांचे में आमूल चूल परिवर्तन किये जाने की आवश्यकता है।

स्वास्थ्य के लिए सफाई भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी की स्वच्छ पेयजल सप्लाई। फिर यह तो उससे भी बड़ी समस्या है पर इसके लिए जुटाये गये साधन कम हैं। सफाई की जो स्थिति आज है उसे यथास्थिति बनाए रखने के लिए भी उपलब्ध साधन अपर्याप्त हैं। शहरीकरण होने की प्रवृत्ति इस समस्या को और विकट बना रही है।

स्वच्छता को बढ़ावा देने के लिए आम तौर पर सामान्य समाधान खोजने के प्रयास किये जाते हैं जो विविध आवश्यकताओं और प्रसंगों की अनदेखी के कारण सफल नहीं हो पाते हैं। गांवों की जरूरतें शहरों से भिन्न होती हैं। दोनों ही स्थानों पर जन भावना का कोई महत्व नहीं है, तात्कालिक स्वच्छता के पक्षधर बनकर हम लम्बे समय तक कारगर सफाई के अनुभव को समझना भूल जाते हैं।

यदि हम स्वच्छता की नीति को एक विशेष वातावरण में अथवा व्यापक दृष्टिकोण से अथवा अति सूक्ष्म रूप में परिभाषित करें तो यह निश्चित नहीं है कि उसे सफलता मिल जाए। आज की परिस्थितियों में प्रदूषण नियंत्रण और पर्यावरण संरक्षण का कार्य क्षेत्र इतना व्यापक हो गया है कि घरों के मल-मूत्र और कूड़े करकट के निपटान के प्रबन्ध की ओर ध्यान ही नहीं दिया जाता। ग्रामीण क्षेत्रों में जहां गड्ढों वाले शौचालयों की ओर जो थोड़ा बहुत ध्यान दिया गया है उससे मल-मूत्र का पूरा निदान तो हो नहीं पाता बल्कि बरसात अथवा बाढ़ के दिनों में यही व्यवस्था बीमारी फैलने का कारण बन जाती है। तात्कालिक आपदा राहत से चिरस्थायी सफाई तो हो नहीं पाती क्योंकि उस समय के उपायों में स्वच्छता का मूल लक्ष्य तो शामिल नहीं होता। प्राकृतिक आपदा की उस भयानक स्थिति में हम इतने घबराये हुए होते हैं कि दूरगामी एवं चिरस्थायी सफलता के लिए कोई जोखिम उठाने को तैयार नहीं होते हैं।

स्वच्छता का प्रचार-प्रसार होना इसलिए भी कठिन है क्योंकि पारम्परिक रूप से लोग मल-मूत्र, कूड़े करकट, मैला आदि के विषय को घिनौना समझते है और उस पर चर्चा करने से भी कतराते हैं। फिर जिन लोगों को यह दायित्व सौंपा गया है, चाहे वे डाक्टर हों अथवा इंजीनियर, वे भी इसके समाधान के प्रभावशाली तरीकों से अनभिज्ञ होते हैं, वे उच्च वर्ग से नीचे की ओर जाने वाले तरीके और नीतियां अपनाते हैं जिससे 'लक्षित वर्ग' की आवाज, इच्छा और भागीदारी दफन हो जाती है। स्वच्छता के बारे में सामाजिक दायित्वपूर्ण खरीद-फरोख्त और भागीदारी पूर्ण नीति अपनाना एक अच्छी पहल है। लेकिन यह अपनी बाल्यावस्था में है और अभी हमें बहुत कुछ सीखना, समझना है। इसके लिए ऊपर से नीचे तक सभी स्तरों पर अधिकारियों/कर्मचारियों और जन प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण दिये जाने की आवश्यकता है।

स्वच्छता न होने से सर्वाधिक शिकार बच्चे होते हैं, जिनके लालन-पालन का उत्तरदायित्व माताओं का ही होता है, फिर समस्याओं का समाधान निकालने के बारे में निर्णय पुरुष ही क्यों लेते हैं, महिलाओं को प्रमुख भागीदार क्यों नहीं बनाया जाता जबकि इस दिशा में व्यावहारिक परिवर्तन महिलाएं ही ला सकती हैं। उनकी समस्याओं को वे अधिक समझ सकती हैं और उसका कारगर हल निकाल सकती हैं। महिलाओं को पुरुषों की अपेक्षा अधिक सुरक्षा, एकान्त और पर्दे की आवश्यकता होती है। लेकिन हो ऐसा रहा है कि सफाई की समस्या से जो सबसे अधिक प्रभावित वर्ग, महिलाएं हैं उसी की बात नक्कार खाने में तूती की आवाज बनकर रह जाती है। आवश्यकता इस बात की है कि जिन लोगों को यह काम सौंपा जाए वे इस ओर अधिक ध्यान दें कि लोग क्या चाहते हैं, उनकी मान्यता क्या है। और यदि उनकी मान्यता में परिवर्तन लाना है तो उनका विश्वासपात्र बनकर उनकी धारणा को बदला जाए।

स्वच्छता के लिए गांव को मूल इकाई के रूप में माना जाना चाहिए और उसकी चहुंमुखी कवरेज की नीति अपनाना जरूरी है। स्वयंसेवी संगठनों को प्रोत्साहन देने की एक स्पष्ट नीति की आवश्यकता है। तकनीकी अध्यापकों को प्रशिक्षण देने वाले संस्थानों से लेकर, विश्वविद्यालयों, कालेजों, स्कूलों और प्राथमिक पाठशालाओं की पाठ्य पुस्तकों में स्वच्छता की संकल्पना को शामिल किया जा सकता है।

संविधान (73 वां संशोधन) विधेयक, 1992 के लागू होने और समूचे राष्ट्र में पंचायती राज संस्थाओं को इनके नए परिवेश के साथ अस्तित्व में लाने से गांवों में विकास के प्रति आशा की एक नई किरण दिखाई दी है। स्वच्छता का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व ग्राम पंचायतों को सौंपा जाए और उन्हें साधन सम्पन्न बनाया जाए ताकि हम अपेक्षित लक्ष्य को प्राप्त कर सकें जैसा कि हमारे महान नेता और राष्ट्र के पहले प्रधानमन्त्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि "जिस दिन हमारे सभी देशवासियों को शौचालय सुविधा मिल जाएगी, उस दिन मैं समझूंगा कि हमारा देश प्रगति की पराकाष्ठा पर पहुंच गया है।"

पंडित नेहरू की कथनी को करनी में बदलने के लिए यदि स्वच्छता की मांग एक "जन आंदोलन" के रूप में उठे तो मार्ग में आने आने वाली अनेक बाधाएं स्वतः ही दूर हो जाएंगी। इसमें कोई संदेह नहीं कि ग्रामवासी हो अथवा शहरी, हर व्यक्ति को सफाई तो चाहिए। परन्तु अड़चन यह आती है कि जिस कीमत पर उसे यह सुविधा उपलब्ध होती है, क्या वह उसे चुका पाने की स्थिति में है भी, अथवा नहीं। यदि नहीं, तो भी उसके लिए सफाई जुटाने का क्या तरीका हो सकता है। समझना यह है कि कहां सफाई की हालत बदतर है और मांग कम क्यों है, तभी हम यह तय कर सकते हैं कि इसके लिए राजनीतिक, वित्तीय, तकनीकी अथवा सूचना के प्रसार में किसी मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता है।

वर्तमान प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव ने सत्ता में आने के बाद ग्रामीण पुनरुत्थान और ग्रामीण गरीबी उन्मूलन की ओर अपनी नीतियों के माध्यम से विशेष ध्यान दिया है। उन्होंने आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिए ग्रामीण विकास हेतु धनराशि में लगभग दोगुनी वृद्धि कर इस क्षेत्र को दी जाने वाली तरजीह को सजीव कर दिया है। उन्होंने लक्ष्य रखा है कि आठवीं योजना के अन्त तक लगभग 25 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या को स्वच्छता सुविधाएं मुहैया करा दी जाएं। इसके लिए केन्द्रीय क्षेत्र में 380 करोड़ रुपये और राज्य क्षेत्र में 294 करोड़ रुपये का परिव्यय रखा गया है। केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम की मार्गदर्शिकाओं को नया रूप दिया गया है जिसमें विशेष घटक इस प्रकार हैं:-

- गरीबी की रेखा से नीचे बसर करने वालों के लिए 80 प्रतिशत सब्सिडी।
- ग्रामीण स्वच्छता सामान की दुकानें खोलना।
- महिलाओं के लिए स्वच्छता परिसरों का निर्माण।
- नालियों, खड़ंजों, सोख्ता गड्ढों का निर्माण।
- स्वच्छता शिक्षा के प्रसार हेतु एक समेकित नीति।

सरकार के ये प्रयास तभी फलीभूत हो सकते हैं यदि लोग इन समस्याओं के बारे में चर्चा करेंगे और इनके समाधान में स्वयं को शामिल करेंगे। सम्पूर्ण साक्षरता अभियान से भी बड़े पैमाने पर "स्वच्छता अभियान" शुरू किये जाने की आवश्यकता है। शौचालयों के ऐसे माडल बनाए जाएं जो स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल हों और वहां के निवासियों को स्वीकार्य हों।

अन्त में, यह कहना अनुचित न होगा कि समस्या का समाधान तो है परन्तु उनकी जानकारी का अभाव है। कुछ मामलों में नई नीतियां तैयार किए जाने की आवश्यकता है। यहां तक कि कुछेक मामलों में तो समस्या को मात्र सुस्पष्ट करने से ही हल किया जा सकता है। हमें समस्या के निदान के लिए सैद्धांतिक निर्णय लेना है, नीतियां तैयार करनी है, उन्हें प्राथमिकताओं के क्रम में संजोना है, उन्हें कार्यरूप देना है, उनमें जन-जन को भागीदार और उत्तरदायी बनाना है जिससे यह कार्यक्रम मात्र कार्यक्रम न रहकर एक जन-आन्दोलन बन जाये तब वह दिन दूर न होगा कि हम बापू के सपने को साकार कर सकेंगे।

IV/1611, भोलानाथ नगर,
शाहदरा, दिल्ली-10032

सामाजिक-आर्थिक विकास के परिप्रेक्ष्य में मानव मल की भूमिका

✍ डा० अजय श्रीवास्तव* एवं डा० हिमांशु शेखर**

मानव मल के पर्याप्त व्ययन, निपटान, रखरखाव आदि के अभाव में ज्वर, पेचिश, हैजे जैसी लगभग तीस प्रकार की संक्रामक बीमारियां हो सकती हैं। परन्तु इसके उचित प्रबन्धन, निस्तारण, उपचार और पुनर्प्रयोग के द्वारा हमें उच्चकोटि की कार्बनिक खाद और ऊर्जा प्राप्त होती है। इससे राष्ट्र के विकास में सहायता मिल सकती है और साथ ही हमें स्वच्छ पर्यावरण की प्राप्ति होती है।

मानव मल को हाथ से हटाने या सिर पर ढोने की प्रथा निःसन्देह मानव समाज के लिए कलंक है। अब तक हमारे देश में परम्परागत सामाजिक ढांचे के अन्तर्गत मानव-मल का निस्तारण एक जाति-विशेष से कराने की मानसिकता रही, लेकिन अब इसे पूर्णतया खत्म करना ही होगा। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, गांधीवादी विचारक आचार्य विनोबा भावे, बालकोवा जी, अप्पा साहब पटवर्धन, ईश्वर भाई पटेल, सेनापति बापत एवं श्रीदाते आदि विभूतियों ने शौचालय की सफाई स्वयं करके भावी पीढ़ी के लिए एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया। महात्मा गांधी के जन्म शताब्दी कार्यक्रमों (1969-70) के अंतर्गत भारत सरकार ने सिर पर मैला ढोने की कुप्रथा से इसमें लगे लोगों को मुक्ति दिलाने का संकल्प लिया। राज्य सरकारों से इस दिशा में विशेष अभियान चलाने हेतु आग्रह किया गया। जन-स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रमों को मूर्तरूप देने के उद्देश्य से पश्चिम बंगाल के 107 स्वयंसेवी महिला संगठनों के द्वारा बनाई गई एजेंसी "वूमन कोआर्डिनेशन काउंसिल" ने कल्याण विभाग और यूनीसेफ के सहयोग से 125 गांवों में आंगनबाड़ी केन्द्रों में जागरूकता कार्यक्रम चलाए और शौचालयों का निर्माण किया। सुलभ इण्टरनेशनल (एक स्वयंसेवी संस्था) ने देश में करीब छह लाख सुलभ शौचालयों का निर्माण कर कीर्तिमान स्थापित किया तथा लगभग दो हजार सामुदायिक शौचालय भी स्थापित किए है। साथ ही मानव मल से बायोगैस के उत्पादन हेतु सुलभ ने 61 बायोगैस संयंत्र भी लगाए हैं। 1986 में तत्कालीन प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्री राजीव गांधी के प्रयासों से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के परिवारों तथा गरीबी की रेखा से नीचे निवास कर रहे परिवारों के लिए शौचालयों की व्यवस्था हेतु 'केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम' शुरू किया गया। परन्तु संसाधनों की कमी से कार्यक्रम फलीभूत न हो सका।

सिर पर मैला ढोने की प्रथा को रोकने के लिए ऐसा कराने वालों के खिलाफ जुर्माने और सजा के प्रावधान वाले विधेयक को लोकसभा में सर्वसम्मति से पारित कर दिया गया। विधेयक पर हुई चर्चा में शहरी विकास मंत्री श्रीमती शीला कौल ने बताया कि पांच राज्यों ने अभी तक इसके लिए मंजूरी दे दी है। शेष की मंजूरी आनी बाकी है। उन्होंने कहा कि गृह मंत्रालय से भी कहा गया है कि वह जेल आदि जगहों में ऐसे शौचालयों को बदले। मात्र रेलों के लिए इसमें छूट दी गयी है। उन्होंने कहा कि इन सफाई कर्मियों के पुनर्वास के लिए कल्याण मंत्रालय ने एक योजना भी बनाई है। सदस्यों ने ग्रामीण क्षेत्रों में सार्वजनिक शौचालयों का निर्माण करने के लिए केन्द्र से आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने का आग्रह किया और मैला ढोने वालों को 'सफाई कर्मी' का दर्जा देने तथा मैला ढोने की ठेका प्रणाली समाप्त करने की मांग की।

मानव-मल प्रबन्धन एवं पुनर्प्रयोग में जन भागीदारी

हमारे देश में यह परम्परागत धारणा रही है कि घर की चहारदीवारी के इर्द-गिर्द शौच करने से घर की पवित्रता नष्ट होती है। देवपुराण में भी घर के इर्द-गिर्द शौच करना निषिद्ध माना गया है लेकिन खेद है कि हमारे देश में ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता की समस्या वहां की सामाजिक प्रवृत्ति और अनेक व्यावहारिक समस्याओं के कारण जटिल हो चुकी है। ग्रामीण जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग आर्थिक रूप से निर्धन और शिक्षा की दृष्टि से पिछड़ा है। उसकी सोच है कि स्वच्छता खर्चीली है। सरकार द्वारा

*भू-विज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005 (उ. प्र.)
**रसायन विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005 (उ. प्र.)

चलाये गए ग्रामीण स्वच्छता कार्य इसलिए सफल नहीं हो सके क्योंकि इन कार्यक्रमों में लोगों की भागीदारी नहीं के बराबर थी। इसके अतिरिक्त इन कार्यक्रमों में क्षेत्र विशेष के सामाजिक और सांस्कृतिक पहलुओं को शामिल नहीं किया गया था। ग्रामीण क्षेत्रों में पुनर्निर्माण की दृष्टि से 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम की शुरूआत हुई थी जिसका उद्देश्य ग्रामीणों के सहयोग से विकास योजनाओं को मूर्तरूप देना था। पर केन्द्र सरकार का यह 'ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम' फलीभूत न हो सका। स्वच्छता कार्यक्रमों की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि क्षेत्रीय जनता को मल निकासी से स्वास्थ्य को होने वाली हानियों के बारे में कितना ज्ञान है। आज जरूरत इस बात की है कि लोग इस तथ्य को समझें कि राष्ट्र और समाज में खुशहाली का दौर तभी आ सकता है जबकि उनका स्वास्थ्य ठीक-ठाक हो। अपनी संपूर्ण क्षमताओं का सदुपयोग कोई तभी कर सकता है जब वह अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक हो। राष्ट्रीय विकास का पहलू जन-स्वास्थ्य से कहीं न कहीं से जुड़ा है। लेकिन अभी तक विकास योजनाओं में स्वच्छता के अहम् मुद्दे को सम्मिलित नहीं किया गया है।

राष्ट्रपिता द्वारा शुरू किए गए कार्यक्रम ग्रामोद्धार में मानव मल का निस्तारण एक प्रमुख अंग था। स्वतंत्रता आंदोलन में ग्रामीण स्वच्छता का कार्यक्रम अनेक विभूतियों द्वारा शुरू किये गए रचनात्मक कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण हिस्सा था। इन कार्यक्रमों से मानव मल से फैलने वाली बीमारियों को रोकने में वैज्ञानिक दृष्टिकोण और चेतना का विकास हुआ। आज भी अनेक स्वयंसेवी संस्थान इस दिशा में प्रयासरत हैं यथा—सुलभ इण्टरनेशनल, महाराष्ट्र गांधी स्मारक निधि, हरिजन सेवक संघ, रामकृष्ण मिशन आदि। महाराष्ट्र गांधी स्मारक निधि, पुणे ने अप्पा साहब पट्वर्धन के कुशल मार्गदर्शन में सोपा संडास पद्धति के प्रचारार्थ महाराष्ट्र के प्रायः प्रत्येक जिले में शिक्षित युवकों को 1962 में एक-एक माह का प्रशिक्षण देने का कार्यक्रम शुरू किया। इस दिशा में कार्यरत संस्थाओं में से कुछ विश्व बैंक, लोक कार्यक्रम तथा ग्रामीण प्रौद्योगिकी विकास परिषद, कापार्ट तथा यूनीसेफ आदि के सहयोग से संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता का कार्य करते हैं। लेकिन विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा घोषित लक्ष्य "सन् 2000 तक सभी के लिए स्वास्थ्य" अधूरा ही प्रतीत हो रहा है। सन् 1991-92 के अन्त तक महज तीन प्रतिशत आबादी को ही स्वच्छता सुविधाएं मिल पाईं परन्तु राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (1988-89) के अनुसार निजी प्रयासों के कारण यह दर 10.96 प्रतिशत रही। अब तक सस्ते शौचालय के विभिन्न विकल्प प्रस्तुत किए गये हैं, ये हैं : टैंक शौचालय, वाटरशील शौचालय, एक्वा प्राइवी शौचालय, पोर फ्लश शौचालय, कम्पोस्टिंग शौचालय एवं गोपुरी शौचालय।

यूनीसेफ ने हमारे देश में ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। पश्चिम बंगाल में तीन गैर सरकारी संगठनों के सहयोग से यूनीसेफ ने सन् 1982 में ग्रामीण सफाई योजनाएं आरम्भ कीं। उसी वर्ष यह कार्यक्रम आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र व मध्य प्रदेश में भी शुरू किया गया। सन् 1984 में यूनीसेफ ने भारत सरकार और संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम के साथ मिलकर गांवों में एक अध्ययन शुरू किया ताकि ज्ञात हो सके कि ग्रामीण क्षेत्रों के लोग सामुदायिक शौचालय को कितना पसन्द करते हैं। अध्ययन से मालूम हुआ कि इस प्रकार के शौचालय ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यन्त लोकप्रिय हैं। रामकृष्ण मिशन जैसी महत्वपूर्ण संस्था ने मिदनापुर सफाई परियोजना का क्रियान्वयन किया है। यूनीसेफ ने 1990 में रामकृष्ण मिशन को सहयोग देना प्रारम्भ किया। लाभार्थी स्वयं शौचालय एवं अन्य सुविधाओं का खर्च उठा रहे हैं। यूनीसेफ तकनीकी विकल्प व शौचालयों की स्थापना संबंधी जानकारी दे रहा है। साथ ही रोग-प्रतिरोधी टीके लगाना, शिक्षा, पोषण व महिलाओं के लिए आय के साधन उपलब्ध कराना जैसे महत्वपूर्ण कार्यों को संचालित कर रहा है। ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम में एक महत्वपूर्ण घटना रही है— ग्रामीण स्वच्छता बाजारों की स्थापना (आर.एस.एम.), जहां शौचालयों के निर्माण एवं अन्य सफाई सुविधाओं के लिए अपेक्षित सामग्री मुहैया कराई जाती है। सर्वप्रथम ये बाजार उत्तर प्रदेश में स्थापित हुए। इस समय राज्य में 12 ग्रामीण स्वच्छता सेवा केन्द्र हैं जो विभिन्न स्थानों पर स्थित हैं। इन केन्द्रों का मार्गदर्शन और इनकी समस्त गतिविधियों की देखरेख पंचायती राज विभाग, जिला पंचायत राज कार्यालयों के माध्यम से करता है और यूनीसेफ द्वारा इन्हें वित्तीय और प्रबन्धकीय सुविधा भी उपलब्ध करायी जाती है। विगत 5-6 वर्षों से सामुदायिक प्रोत्साहन कार्यक्रम के अंतर्गत कुछ जागरूक स्वयंसेवी कार्यकर्ताओं के माध्यम से लाखों घरेलू शौचालयों का निर्माण कर लोगों में स्वच्छता की अवधारणा विकसित की जा रही है।

इस प्रकार सामुदायिक भागीदारी से स्वच्छता की अवधारणा विकसित और व्यापक हो जाएगी और इसे जन-आन्दोलन बनाने

में आने वाली परेशानियों से मुक्त हुआ जा सकता है। हर्ष का विषय है कि ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रमों में जन-रुचि व भागीदारी व्यापक होती जा रही है।

मानव मल प्रबन्धन एवं पर्यावरणीय पहलू

मानव द्वारा त्याज्य मल, अपशिष्ट का सही निस्तारण और प्रबंधन आज की सबसे बड़ी समस्या है। मानव मल में उपस्थित हानिकारक पदार्थों से स्वास्थ्य को खतरा पहुंचने की संभावना रहती है क्योंकि अनेक रोगों की जड़ अपर्याप्त सफाई है। मानव मल में उपस्थित रोगाणु, जीवाणु, परजीवी, प्रोटोजोआ व वायरस से ज्वर, पेचिश, हैजा, आमावतिसार, पीत ज्वर जैसी अनेक जानलेवा और संक्रामक बीमारियां हो सकती हैं। वैज्ञानिकों ने अब मानव मल के निस्तारण के साथ-साथ मानव मल प्रबन्धन पर भी जोर देना शुरू किया है। क्योंकि बेकार और अनुपयुक्त समझी जाने वाली चीजों के उपयुक्त प्रबन्धन व पुनः उपयोग से हम क्षेत्रीय अर्थ व्यवस्था को सुदृढ़ कर सकते हैं। मानव मल प्रबन्धन से हमें उच्च स्तर की कार्बनिक खाद प्राप्त होती है जिसके उपयोग से कृषि भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ा सकते हैं और ग्रामीण व राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था मजबूत कर सकते हैं। मानव मल के पुनश्चक्रण से पौधों को प्राप्त होने वाले पोषक आहार यथा—नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैशियम की पूर्ति हो जाती है। इस प्रकार मानव मल प्रबंधन से हम दुहरे लाभ की प्राप्ति की स्थिति में होते हैं। एक ओर जहां हमारी खाद सम्बंधी आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है वहीं दूसरी ओर कृत्रिम रासायनिक खादों पर निर्भरता स्वतः कम हो जाती है। फलस्वरूप पर्यावरणीय दृष्टि से हम सुरक्षित रहते हैं और अनेक रोगों से बचे रहते हैं।

मानव द्वारा त्याज्य मल के अवायवीय किण्वन से इसमें उपस्थित कार्बनिक यौगिक का जैवनिम्नीकरण होता है और बायोगैस प्राप्त होती है जिसमें मीथेन गैस की प्रचुर मात्रा होती है। यह क्रिया तीन चरणों में सम्पन्न होती है। प्रथम चरण में किण्वन जीवाणु इन्जामाइटिक हाइड्रोलाईसिस द्वारा जटिल कार्बनिक पदार्थ को घुलनशील कार्बनिक पदार्थ में बना देता है। दूसरे चरण में हाइड्रोजन उत्पन्न करने वाले एसिटोबेनिक जीवाणु उपर्युक्त घुलनशील कार्बनिक यौगिक को क्रमशः एसीटिक अम्ल, कार्बन डाईआक्साइड तथा हाइड्रोजन में बदल देते हैं। अंतिम चरण में मिथेनोजेनिक जीवाणु एसीटिक अम्ल के किण्वन से मीथेन बनाते हैं अथवा उपर्युक्त प्रक्रिया में उत्पन्न हाइड्रोजन गैस कार्बन-डाईआक्साइड से मिथेन बनाती है। एसीटेट या फार्मेट के विखण्डन से भी मिथेन गैस का निर्माण होता है। इस किण्वन के फलस्वरूप प्राप्त उत्पाद पर्यावरण को संरक्षित रखता है। इसमें रोगजनक एवं कार्बनिक प्रदूषक पदार्थ की मात्रा बहुत ही कम हो जाती है। इसके साथ ही उच्च कोटि की कार्बनिक खाद प्राप्त होती है।

आर्थिक दृष्टिकोण से मानव मल की महत्ता

एक व्यक्ति के एक माह के मल के द्वारा करीब 1 घनमीटर गैस बनती है तथा एक व्यक्ति के भोजन के लिए प्रतिमाह लगभग 4-5 घनमीटर गैस की आवश्यकता होती है। इस प्रकार सार्वजनिक स्थान पर शौचालय के निर्माण से एक कैन्टीन का कार्य अच्छी भांति हो सकता है। अतः रेलवे स्टेशन, बस स्टैण्ड, कालेज, आफिस आदि स्थानों पर इसे निर्मित करवाना अति आवश्यक है। 1.6 घन मीटर गैस एक लीटर किरोसन तेल से प्राप्त ऊर्जा के समतुल्य है। इस प्रकार हम कहते हैं कि करीब 48 मानवों का मल एक लीटर किरोसन तेल का कार्य करता है, साथ ही हमें खाद की भी प्राप्ति होगी। लगभग 30 घनमीटर बायोगैस से 8 घंटे तक 1.5 किलोमीटर मार्ग पर ट्यूब लाइटें या एक किलोमीटर मार्ग पर मरकरी वेपर बत्तियां जलाई जा सकती हैं।

बायोगैस पर आधारित पांच हार्सपावर के इंजन के संचालन में करीब 30 प्रतिशत डीजल और 70 प्रतिशत बायोगैस की आवश्यकता होती है। इसके लिए 1.48 घन मीटर बायोगैस और 1.27 लीटर डीजल की प्रति घंटा खपत है। लागत लाभ पर आधारित सन् 1978 का एक आकलन, जबकि डीजल मात्र 1.40 रुपये प्रति लीटर था, से स्पष्ट है कि उपर्युक्त विधि से प्राप्त ऊर्जा डीजल से प्राप्त ऊर्जा से लगभग 27 प्रतिशत सस्ती पड़ती थी। आज जबकि लगभग डीजल के मूल्य में 6 गुना बढ़ोत्तरी हुई है, बायोगैस से प्राप्त ऊर्जा 27 प्रतिशत से भी काफी अधिक सस्ती होगी।

एक मनुष्य के मल द्वारा 14-15 ग्राम नाइट्रोजन, 3-4 ग्राम फास्फोरस और 4-6 ग्राम पोटैशियम उत्सर्जित होता है। इन आंकड़ों के आधार पर पाया गया कि एक कम लागत वाले शौचालय, जिसे एक पांच सदस्यीय परिवार उपयोग करता है, से एक वर्ष में न्यूनतम रूप से 12.5 किलोग्राम नाईट्रोजन, 4 किलोग्राम फास्फोरस और 6.5 किलोग्राम पोटेशियम प्राप्त होता

है। हाल की कीमतों के आधार पर इनकी कीमत करीब 400 रुपये होती है। इस प्रकार दस वर्षों में हम शौचालय की लागत का दुगुना लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इस सन्दर्भ में हम कह सकते हैं कि यदि भारतीय ग्रामीण जनसंख्या का दसवां भाग भी ऐसे शौचालयों का उपयोग करता है तो हमें प्रतिवर्ष लगभग 1.5 लाख टन नाइट्रोजन, 0.5 लाख टन फास्फोरस एवं 0.75 लाख टन पोटेशियम उर्वरक प्राप्त होगा, जो हमारी ग्रामीण अर्थ व्यवस्था को सुदृढ़ करेगा तथा खाद के आयात में करोड़ों रुपये के खर्च से भी छुटकारा मिल जायेगा। साथ ही बहुत हद तक बेरोजगारी की समस्या का समाधान हो सकेगा।

हाल के वर्षों तक चीन में कुल उर्वरक की मात्रा का लगभग तीसरा भाग मानव मल से ही पूरा किया जाता रहा है। अगर अपने देश की विभिन्न नदियों में गिरने वाले मल-जल का सही उपचार करने में हम सफल रहें तो हमें 8200 टन नाइट्रोजन और 24000 टन फास्फोरस की प्राप्ति होगी। अमरीका में मल-जल के उपचार से लगभग 14 लाख टन नाइट्रोजन पैदा होती है जिससे प्रतिवर्ष एक खरब डालर की बचत होती है। पश्चिमी जर्मनी के म्यूनिख नगर में 12 प्रतिशत विद्युत का उत्पादन कूड़े-कचरे एवं मल-जल के द्वारा होता है।

उपसंहार

आज संपूर्ण विश्व पर्यावरण प्रदूषण की चपेट में है। कुल जल-प्रदूषण का 80 से 85 प्रतिशत भाग घरेलू मल-जल के निःसृत होने से हो रहा है ऐसी स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति स्वच्छ पर्यावरण का आकांक्षी है क्योंकि उसे भली-भांति ज्ञात है कि "स्वस्थ जीवन का आधार" स्वच्छ पर्यावरण है। यहां पर स्पष्ट कर देना उपयुक्त होगा कि स्वच्छता जहां एक ओर जीने की पद्धति और जीवन स्तर मापने का पैमाना है, वहीं यह एक सामाजिक और सांस्कृतिक समस्या भी है। मल-जल व मानव मल का विधिपूर्वक संग्रहण करके उसके उपचार और उपयुक्त प्रबन्धन से एक ओर जहां हम जलजनित रोगों पर नियंत्रण प्राप्त कर सकते हैं, वहीं दूसरी ओर उच्चकोटि की कार्बनिक खाद प्राप्त कर भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि कर सकते हैं इससे ऊर्जा-समस्या, पर्यावरण-प्रदूषण की समस्या और संसाधनों के विकल्प आदि का सम्मिलित रूप से उपचार संभव है। साथ ही एक बड़ी आबादी को रोजगार प्रदान किया जा सकेगा। भारत में ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने के लिए बायोगैस संयंत्र एक प्रमुख भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं। दूसरी ओर मल पदार्थ का उचित प्रबंधन पर्यावरणीय दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। मल पदार्थ को पूर्णरूपेण व्ययन और नष्ट करने पर जोर न देकर इसके पूर्व प्रबंधन, उपचार एवं पुनर्प्रयोग करके ग्रामीण व्यवस्था को विशेषकर सुदृढ़ बना सकते हैं, लोगों में सामुदायिक भागीदारी की भावना जागृत कर गरीबी, असमानता, बेरोजगारी जैसी सामाजिक बुराइयों से निश्चित सीमा तक मुक्त हो सकते हैं।

(पृष्ठ 10 का शेष)

उसकी ढील या चूक उसको समाज में बदनाम कर सकती है। यह बात दीगर है कि वह आस-पड़ोस में अपना कूड़ा-कचरा या पंड़ोह (नाली) का पानी फैलाने में कम ही संकोच करती है। गांवों में पारम्परिक तौर पर घर का रसोई वाला भाग सोने या आराम करने वाले भाग की अपेक्षा अधिक साफ-सुथरा रखा जाता है।

फिर भी, स्वास्थ्य के मामले में इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि आज ग्रामीण भारत पिछले वर्षों की अपेक्षा काफी सजग और सक्रिय है। दैविक आपदाओं और अप्रत्याशित महामारियों की विभीषिका को अब साफ-सफाई की समस्या से जोड़कर देखा जाने लगा है। आकाशवाणी, दूरदर्शन, समाचार पत्रों और शिक्षा के बढ़ते स्तर से स्थिति में सुधार हो रहा है। लेकिन कुल मिलाकर 'ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रमों' के प्रोत्साहन के लिए भारी प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। इसमें सरकारी कार्यक्रम ही नहीं जन-सहयोग की भी जरूरत होगी।

6/3 ब्लाक दो,
न्यू मिन्टो रोड होस्टल,
नई दिल्ली-110002.

ग्रामीण स्वच्छता—समस्या और समाधान

✍ यतीश मिश्र

विकसित और विकासशील देशों के बीच एक खास अंतर मानवीय जीवन के स्तर का भी है। विकसित देश बहुत पहले से ही अपने पर्यावरण के प्रति सचेत हो गए थे और उसे सुधारने और दूषित होने से बचाने की कोशिश करते रहे हैं। इसी का परिणाम है कि आज उनके पास शुद्ध पेयजल, स्वच्छ वातावरण, पर्याप्त आवास और उपयुक्त स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध हैं। परन्तु भारत जैसे विकासशील देशों में मानवीय हालात इसके ठीक विपरीत हैं।

विश्व की आधी से अधिक जनसंख्या विकासशील देशों में ही रहती है। इनमें से अधिसंख्य लोग रोगग्रस्त हैं खासकर, आंत संबंधी बीमारियों से। इनकी स्थिति में सुधार की क्या संभावनाएं हैं? इसके लिए हमें यहां के वातावरण के विभिन्न पहलुओं की समीक्षा कर उनमें हो सकने वाले सुधारों पर विचार करना पड़ेगा।

इस दृष्टिकोण से हम इसे तीन श्रेणियों में बांट सकते हैं : जलापूर्ति, कूड़े करकट की सफाई और रोगवाहकों पर नियंत्रण। पर्यावरण के इन तीन पहलुओं से जुड़ी समस्याएं इस दशक की सबसे विकट समस्याएं हैं जिनका समाधान अति आवश्यक है।

जलापूर्ति

जल मानवीय वातावरण का एक आवश्यक अंग है। विश्व भूभाग के तीन चौथाई हिस्से में जल भरा है। महाकाव्य रामचरितमानस में भी कहा गया है-छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा। यह सच है कि मानव जीवन जल के बिना संभव नहीं है। पर यह भी सच है कि यही जल हमारे लिए जान लेवा बन जाता है जब हम इसे दूषित रूप में ग्रहण करते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा पिछले दशक में किए गए एक सर्वेक्षण से सिद्ध हो चुका है कि विकासशील देशों में उपलब्ध जल पीने के लायक नहीं है। इस रिपोर्ट में कहा गया है कि इन देशों के अधिसंख्य लोगों, विशेष रूप से गांवों में रहने वाले लोगों के लिए उपलब्ध पेयजल हानिरहित नहीं है।

अगर हम जनसंख्या वितरण की दृष्टि से विकसित और विकासशील देशों की तुलना करें तो पाएंगे कि विकसित देशों में जनसंख्या का न्यूनतम भाग ही गांवों में रहता है। मसलन, पश्चिमी जर्मनी में 6.14 करोड़ जनसंख्या का मात्र 3.7 प्रतिशत गांवों में बसता है। जबकि विकासशील देशों में अधिसंख्या गांवों में रहती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण में कहा गया है कि विकासशील देशों में 72 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। अफ्रीकी महाद्वीप के कुछ देशों में यह प्रतिशत बढ़कर 83 तक चला गया है।

शुद्ध पेयजल की उपलब्धता

एक सर्वेक्षण बताता है कि देहाती इलाकों के सात व्यक्तियों में एक व्यक्ति को शुद्ध पेयजल मिल पाता है जबकि शहरी इलाकों के चार व्यक्तियों में से तीन व्यक्तियों को यह सुविधा प्राप्त है। यहां उल्लेखनीय है कि ग्रामीण इलाकों का यह अनुपात सरकारी या गैर सरकारी प्रयासों और शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कारण दशक या अर्द्धदशक में घटता बढ़ता रहता है।

शुद्ध पेयजल की अनुपलब्धता के कारण बहुत तरह की जानलेवा बीमारियां होती हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक सर्वेक्षण में कहा गया है कि सन् 1979 में पांच साल की उम्र तक के 1.36 करोड़ बच्चों की मृत्यु हुई थी जिसमें 1.31 करोड़ बच्चे विकासशील देशों के थे। इनमें से अधिसंख्य की मृत्यु दूषित जल पीने के कारण हुई थी।

कूड़े करकट की सफाई

विकासशील देशों में कूड़े करकट की समस्या पेयजल की समस्या से गंभीर है। ग्रामीण क्षेत्रों में इनकी समस्या तो गंभीरतम है। पर्यावरण की दृष्टि से इन दोनों का आपस में गहरा संबंध है। जिन क्षेत्रों में कूड़े करकट की सफाई की व्यवस्था अच्छी होती है, उन क्षेत्रों में पेयजल की गुणवत्ता भी अच्छी होती है। भारत जैसे विकाशसील देशों में राष्ट्रीय विकास की योजनाओं के बारे में अनुभव बताता है कि यहां सबसे पहले जलापूर्ति सम्बन्धी योजनाओं को प्राथमिकता दी गई और कूड़े कचरे की सफाई को

शोध अधिकारी, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, इन्द्रप्रस्थ स्टेट, नई दिल्ली-110002

द्वितीय स्थान पर रखा गया। संबंधित इलाकों की गंदगी को बिना हटाए ही जलापूर्ति करने वाली मशीनों और उनके ताने-बाने को लगाकर इनसे काम लेना शुरू कर दिया जाता है। इससे आपूर्तित जल दूषित हो जाता है। अतः जरूरत इस बात की है कि विकास योजनाओं में इन दोनों पहलुओं को साथ-साथ लेकर चला जाए।

गांवों में सफाई की समस्या शहरों की अपेक्षा ज्यादा गंभीर है। साधारणतया गांवों में शौच क्रिया खुले में की जाती है और सफाई का कोई सामूहिक प्रयास नहीं किया जाता है। गंदगी बढ़ती रहती है। इससे लोग अनेक बीमारियों के शिकार हो जाते है। ऐसी बीमारियों का प्रकोप वर्षा ऋतु में बढ़ जाता है। इससे मुक्ति पाने के लिए बृहद पैमाने पर शौचालयों का निर्माण किया जाना जरूरी है। कोशिश होनी चाहिए कि शौचालयों में इस्तेमाल होने वाली वस्तुएं स्थानीय हों। ऐसा करने से शौचालयों की लागत कम होगी और अधिक से अधिक लोग इन्हें अपनाने में रुचि लेंगे।

गांवों में शुद्ध जल को उपलब्ध कराने के लिए कृषि सिंचाई पर आधारित एक तकनीक का सुझाव दिया गया है। इस तकनीक पर आधारित मशीन के तीन फायदे हैं। एक तो इससे खतरनाक अशुद्ध पानी को शुद्ध जल के स्रोतों तक पहुंचने से रोका जाता है। दूसरे, इससे निष्कासित पानी से सिंचाई के साथ-साथ जमीन की उर्वरा शक्ति बढ़ती है। और तीसरे, इस पानी को एक खास तरह से बनाए तालाब में रखकर मछली उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। इतना ही नहीं, इस तालाब के पानी से कुछ खास तरह की फसलों की अच्छी पैदावार हो सकती है। लेकिन इसके लिए सम्बद्ध अधिकारी, किसान और लोगों को इस सम्बन्ध में पर्याप्त सावधानियां बरतनी पड़ेगी।

चूंकि यह पानी अशुद्ध व हानिकारक होता है। अतः इस पानी को ले जाने वाली नालियों को लाल रंग से रंग देना चाहिए। प्लांट के चारों ओर कंटीले तार लगाने चाहिए और इसमे कार्यरत कर्मचारियों को नंगे पांव काम नहीं करना चाहिए। ऐसे पानी में उपजी फसलों को बिना उबाले नहीं खाना चाहिए।

ग्रामीण स्वच्छता की समस्याएं

भारत कृषि प्रधान देश है। इससे देश की अधिसंख्य आबादी अपनी जीविका के लिए कृषि पर आधारित है। इसलिए देश और देशवासियों की समृद्धि के लिए आवश्यक है कि कृषि उत्पादन बेहतर हो। बेहतर उत्पादन के लिए कृषकों का स्वास्थ्य उत्तम होना जरूरी है। यह इसलिए भी कि खेती में शारीरिक श्रम अधिक लगता है। पर दुर्भाग्य से हमारे किसान शुद्ध पेयजल और स्वच्छ वातावरण के अभाव में जी रहे हैं। समय-समय पर केन्द्र व राज्य सरकारें अपनी विभिन्न योजनाओं द्वारा इस दिशा में कुछ करने की कोशिश करती रहती हैं। लेकिन अभी बहुत कुछ करना बाकी है।

इनके समाधान के लिए सरकार और लोगों को साथ मिलकर काम करना होगा। अगर सरकारें योजनाओं द्वारा सहायता करती हैं तो लोगों को चाहिए कि इन योजनाओं द्वारा दी गई सामग्री या मशीनों की देखभाल करें। साथ ही स्वच्छ रहने की आदत डालें और अपने पर्यावरण को भी स्वच्छ रखें।

गांवों में मकान संबंधी कई दिक्कतें हैं। एक तो ये ऊंचाई पर नहीं बने होते। फलस्वरूप बरसात के दिनों में इसमें सीलन आ जाती है। घरों में खिड़कियां नहीं होतीं। इससे मकान हवादार नहीं होते और पर्याप्त रोशनी भी नहीं आ पाती।

आज जरूरत इस बात की है कि गांव में कुएं के पानी को स्वच्छ बनाया जाए। इसके लिए इसे ढका होना चाहिए, नाले के आसपास नहीं होना चाहिए तथा समय-समय पर इसमें ब्लीचिंग पाउडर व पोटेशियम परमैंगनेट डालना चाहिए। पीने के लिए इस्तेमाल होने वाले पानी की जांच भी करवाते रहना चाहिए।

बरसाती पानी और व्यवहृत बेकार पानी का प्रयोग बागवानी के लिए करने से आसपास पानी को जमा होने से बचाया जा सकता है। अक्सर गांवों में इस ओर ध्यान नहीं दिया जाता।

उपलब्ध गोबर या अन्य कूड़े जैसे पुआल, खर-पतवार आदि को एक गड्ढे में रखकर इससे कम्पोस्ट खाद बनाई जा सकती है। इससे एक तो गंदगी नहीं फैलेगी और दूसरे इसका इस्तेमाल पैदावार बढ़ाने के लिए किया जाएगा। सैप्टिक शौचालय बनवाने पर जोर दिया जाना चाहिए। हालांकि सरकारी प्रोत्साहन और सहायता से इस दिशा में काम हुआ है पर अभी भी यह हर घर में मौजूद नहीं है। इन सभी समस्याओं के समाधान के लिए आवश्यक है कि सरकारी व गैर सरकारी संस्थाएं मिलकर गांवों में जन-जागरण का अभियान चलाएं, लोगों को प्रेरित करें, शिक्षित करें और उनकी हर संभव सहायता करें।

यूनिसेफ जल एवं स्वच्छता कार्यक्रम, 1991-95

ग्रामीण पर्यावरण स्वच्छता के क्षेत्र में सुधार संतोषप्रद नहीं हैं और अब तक लगभग तीन प्रतिशत घरों में मलोत्सर्जन की

अच्छी व्यवस्था है। दूषित पर्यावरण का असर लोगों के मस्तिष्क पर भी पड़ता है। हमारे यहां व्यक्तिगत या घरेलू प्रदूषण को लोक स्वास्थ्य से जोड़कर नहीं देखा जाता है। सामान्यतः सफाई पर खर्च करना विलासिता समझा जाता है और इसे घरेलू बजट के वरीयताक्रम में सबसे अंत में रखा जाता है।

95 प्रतिशत से अधिक लोग शौच क्रिया बाहर करते हैं। लेकिन मात्र एक प्रतिशत ही शौच को मिट्टी सें ढकते हैं। 37 प्रतिशत लोग नहीं जानते कि बाहर किया गया शौच अगर ढका न जाए हानिकारक है।

गांवों में शुद्ध पेयजल की पर्याप्त मात्रा में अनुपलब्धता के अलावा पेयजल की अन्य समस्याएं भी हैं जैसे गांवों की भौगोलिक संरचना के कारण वहां जलापूर्ति नहीं हो पाना, जल में फ्लोराइड या बैक्टीरिया का पाया जाना तथा मानसून की गड़बड़ी के कारण जल स्तर का नीचे चला जाना।

पेयजल व पर्यावरण का स्तर संतोषजनक न होने के कारण गांवों में लोगों का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता। भारत में लगभग 80 प्रतिशत बीमारियां प्रदूषित जल पीने के कारण होती हैं। देश के विभिन्न भागों–पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल और महाराष्ट्र में उदर कृमि से लगभग 60 प्रतिशत लोग ग्रसित होते हैं। भयंकर पीड़ा, देने वाली और बहुत कमजोर कर देने वाली एक बीमारी "गिनी कृमि" इन राज्यों के सुदूर इलाकों में गरीबों को अक्सर होती है।

उपरोक्त राज्यों की अधिकांश आबादी यह जानती है कि गंदे पेयजल का स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। पर यह बुरा असर कैसे पड़ता है यह बहुत कम लोग जानते हैं। आबादी के पांचवें हिस्से से भी कम लोगों को यह जानकारी है कि दूषित पेयजल और हैजे की बीमारी का सीधा सम्बन्ध है। गिनी कृमि से प्रभावित इलाके के केवल 22 प्रतिशत लोग जानते हैं कि यह रोग दूषित जल के सेवन से होता है।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में पेयजल आपूर्ति और स्वच्छ पर्यावरण पर बल दिया गया है। 150 व्यक्तियों के लिए एक चापाकल की व्यवस्था है। क्षेत्र के हिसाब से समतल इलाकों में एक चापाकल के लिए अधिक से अधिक एक किलोमीटर की दूरी और पहाड़ी इलाके के लिए अधिकतम दूरी 50 मीटर तय है।

यूनिसेफ सहायता के उद्देश्य

- लोगों, खासकर महिलाओं और बच्चों में स्वास्थ्य के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव लाना तथा पर्यावरण सुधार के प्रति उनमें जागरूकता पैदा करना।
- गिनी कृमि से प्रभावित इलाकों में स्वास्थ्य शिक्षा पर जोर देते हुए शुद्ध पेयजल तथा बेहतर पर्यावरण बहाल कर योजना अवधि के भीतर इस बीमारी का उन्मूलन करना।
- पर्यावरण को स्वच्छ बनाने के लिए सामुदायिक प्रबन्ध, जिसमें समुदाय के सदस्यों, विशेष रूप से महिलाओं की भागीदारी, योजना बनाने से लेकर उसके क्रियान्वयन व सम्बन्धित मशीनों के रखरखाव तक सुनिश्चित करना।
- चुने हुए जिलों में, 150 ग्रामीणों के लिए एक चापाकल द्वारा शुद्ध पेयजल मुहैया कराना तथा 15 प्रतिशत घरों में सैप्टिक शौचालयों का निर्माण करना।
- शुद्ध पेयजल, पर्यावरण स्वच्छता व स्वास्थ्य सेवाओं की योजनाओं के बीच समन्वय स्थापित करना तथा हैजे जैसी संक्रामक बीमारियों पर नियंत्रण रखना।
- पेयजल आपूर्ति और पर्यावरण शुद्धता के लिए कम लागतवाली उपयुक्त तकनीक अपनाना। वितरण प्रणाली को सशक्त बनाने के लिए प्रभावी व्यवस्था पद्धति को अपनाना। इसके लिए योजना के बीच में और समाप्ति के बाद उसका मूल्यांकन करना।
- बेहतर परिणाम हेतु संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न अभिकरणों के साथ समन्वय व सहयोग बनाए रखना।

राष्ट्रव्यापी गतिविधियां

- गिनी कृमि जैसी घातक बीमारी के उन्मूलन हेतु राष्ट्रीय प्रयासों में तेजी लाना।
- पेयजल आपूर्ति तथा पर्यावरण का प्रदूषण रोकने से जुड़ी तकनीकों में पर्याप्त सुधार लाना।
- विशेष उपकरणों का निर्माण, वितरण और रखरखाव विशेष कंपनियों द्वारा करवाना। एक खास अंतराल पर इसकी जिम्मेदारी अन्य विशेष कम्पनियों को देते रहना।
- जलापूर्ति व पर्यावरण स्वच्छता सम्बन्धी उपकरणों को बनाने वाली राष्ट्रीय तथा स्थानीय कंपनियों को प्रोत्साहन देना।

कैसे बनायें सुलभ शौचालय?

✍ डा० विजय कुमार उपाध्याय

देहातों तथा शहरों की झुग्गी-झोपड़ी वाले क्षेत्रों में शौचालय की समस्या काफी अधिक रहती है। गांवों में तो अधिकांश घरों में शौचालय होते ही नहीं। ऐसे घरों के लोग प्रायः खुले मैदान या गलियों में शौच करते हैं। इसके कारण जगह-जगह काफी गंदगी फैली रहती है जहां मक्खियां, मच्छर तथा अनेक रोगों के कीटाणु पनपते हैं तथा आस-पास के क्षेत्रों में रोगों को फैलाने में अपना योगदान देते हैं। शहरों में भी गरीब लोगों के घरों में प्रायः खुले शौचालय (सर्विस लैट्रिन) बनाए जाते हैं जिन्हें साफ करने वालों को प्रायः सर पर ही मैला ढोना पड़ता है। यह एक अवांछनीय कार्य तो है ही, साथ ही इससे आस-पास में गंदगी फैलती है तथा रोगों के फैलने का डर रहता है। कुछ सम्पन्न लोग सेप्टिक शौचालय बनाते हैं। ऐसे शौचालय सफाई के दृष्टिकोण से काफी सुरक्षित होते हैं, परंतु इनके निर्माण के लिये काफी जगह एवं खर्च की आवश्यकता पड़ती है। गरीबी में गुजर करने वाले लोगों को घरों में जगह की कमी रहती है, साथ ही इनकी आर्थिक स्थिति इतनी दयनीय होती है कि वे सेप्टिक शौचालय के निर्माण पर आनेवाले खर्च को वहन नहीं कर सकते।

उपर्युक्त समस्याओं से निबटने के लिये सुलभ शौचालय का विकास किया गया है। ऐसे शौचालय बहुत कम स्थान घेरते हैं तथा इनके निर्माण पर आने वाला खर्च भी सेप्टिक शौचालय के निर्माण पर आनेवाले खर्च की तुलना में बहुत की कम है। एक सुलभ शौचालय के निर्माण पर सिर्फ ढाई-तीन हजार रुपये खर्च होते हैं, जबकि एक सेप्टिक शौचालय के निर्माण पर लगभग 10-12 हजार रुपये। सुलभ शौचालयों में दैनिक उपयोग में लाए गए जल की मात्रा भी कम होती है। जहां सेप्टिक शौचालय में प्रति व्यक्ति हर बार लगभग 20 लीटर पानी को उपयोग में लाने की आवश्यकता होती है वहीं सुलभ शौचालय में मात्र दो-ढाई लीटर पानी से काम चल जाता है। इसके अतिरिक्त सुलभ शौचालय के गड्ढे से समय-समय पर खेतों में उपयोग के लिये उत्तम किस्म की खाद भी प्राप्त होती है।

सुलभ शौचालयों के निर्माण हेतु प्रशिक्षित राजमिस्त्री आज लगभग हर स्थान पर उपलब्ध है। कुछ स्वयंसेवी संस्थाएं इसके प्रशिक्षण का कार्य संचालित करती हैं। उदाहरणार्थ सुलभ इंटरनेशनल नामक संस्था इस दिशा में काफी सराहनीय कार्य कर रही है। इस संस्था में प्रशिक्षित मिस्त्री और तकनीकी सलाहकार उपलब्ध हैं।

सुलभ शौचालय के निर्माण हेतु सर्वप्रथम दो गड्ढों का निर्माण किया जाता है। गड्ढों की लंबाई 2.4 मीटर, चौड़ाई 1.05 मीटर तथा गहराई 90 सेंटीमीटर होती है। दोनों गड्ढों को जोड़नेवाली दीवार 23 सेंटीमीटर मोटी तथा बाकी दीवारें 10 सेंटीमीटर मोटी बनायी जाती हैं। दोनों गड्ढे को जोड़नेवाली दीवार तो ईंटों से ऐसे बनायी जाती है जिसमें कोई छेद नहीं हो, परंतु अन्य दीवारें, जो मिट्टी से सटी रहती हैं, जालीदार बनायी जाती हैं। इससे संडास से गड्ढे में आनवोला पानी मिट्टी द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है। ऐसी जालीदार दीवार बनाने के लिये दीवार जोड़ते समय ईंटों की प्रत्येक तीसरी परत के बीच-बीच में 5 x 5 सेंटीमीटर के छेद छोड़ दिये जाते हैं।

गड्ढों के निर्माण के बाद संडास (बैठने वाली सीट) के लिए ऐसा स्थान चुना जाता है जिसकी ढाल गड्ढों के साथ लगभग 45 डिग्री कोण की बनती हो। ढाल तीखी होने से संडास से मल आसानीपूर्वक फिसलकर गड्ढों में आ जाता है। संडास तथा उसके पीछे की दीवार के बीच लगभग 15 सेंटीमीटर की दूरी होनी चाहिए।

संडास से गड्ढों को जोड़ने के लिये वाई (Y) जंक्शन पाइप का उपयोग किया जाता है। इस वाई जंक्शन के धड़ का सिरा संडास की ओर रहता है जबकि दोनों शाखाओं में से एक-एक सिरा एक-एक गड्ढे में जुड़ता है। एक बार में एक ही गड्ढे में जुड़े सिरे को खुला रखा जाता है जबकि दूसरे गड्ढे में जुड़े सिरे को ईंट तथा सीमेंट से बंद कर दिया जाता है। कुछ समय के उपयोग के बाद जब पहला गड्ढा भर जाता है तो इसमें जुड़े वाई जंक्शन के सिरे को बंद कर दिया जाता है तथा दूसरे गड्ढे (जो अब तक उपयोग में नहीं आ रहा था) में जुड़े सिरे को खोल दिया जाता है। दोनों गड्ढों के ऊपर एक-एक ढक्कन लगा रहता है।

जो रासायनिक क्रिया अवायवीय जीवाणुओं द्वारा सेप्टिक शौचालय के गड्ढे में होती है, वैसी ही रासायनिक क्रिया सुलभ शौचालय के गड्ढे में भी होती है। सुलभ शौचालय में उपयोग में लाया गया जल तो जमीन द्वारा सोख लिया जाता है, जबकि

विसर्जित मल कुछ समय बाद सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा एक प्रकार की खाद में बदल दिया जाता है। इस खाद का रंग काला होता है तथा यह खेतों में उपयोग में लाई जाती है।

सुलभ शौचालय में यह सुविधा है कि एक गड्ढा भर जाने के बाद उसे बंद कर दूसरा गड्ढा उपयोग में लाया जाता है। इस बीच पहले गड्ढे में उपस्थित खाद को धीरे-धीरे निकाल कर खेतों में उपयोग में लाया जाता है। फिर जब दूसरा गड्ढा भर जाता है तो पुन : पहले गड्ढे को खोल दिया जाता है तथा दूसरे गड्ढे को बंद कर दिया जाता है तथा इसमें उपलब्ध खाद को उपयोग में लाया जाता है। इस प्रकार बारी-बारी से दोनों गड्ढों का उपयोग किया जाता है।

सुलभ शौचालय के निर्माण के समय एक बात का ध्यान रखना आवश्यक है। चूंकि इसके गड्ढों में संडास से पहुंचने वाला जल जमीन द्वारा सोख लिया जाता है, अतः अंतर्भौमि जल के प्रदूषण का खतरा बना रहता है। जल को प्रदूषण से बचाने के लिये यह आवश्यक है कि सुलभ शौचालय के गड्ढों को पीने वाले जल के स्रोत (जैसे कुआं, हैंड पम्प इत्यादि) से यथासंभव अधिक से अधिक दूरी पर बनाया जाए।

प्राध्यापक, भूगर्भ इंजीनियरी कालेज,
भागलपुर - 813210

आदर्श भारतीय गांव इस तरह बसाया और बनाया जाना चाहिये, जिससे वह सम्पूर्णतया नीरोग हो सके। उसके झोंपड़ों और मकानों में काफी प्रकाश और वायु आ - जा सके। ये झोंपड़े ऐसी चीजों के बने हों जो पांच मील की सीमा के अंदर उपलब्ध हो सकती हैं। हर मकान के आस-पास या आगे-पीछे इतना बड़ा आंगन हो, जिसमें गृहस्थ अपने लिए, साग-भाजी लगा सकें और अपने पशुओं को रख सकें। गांव की गलियों और रास्तों पर जहां तक हो सके धूल न हो। अपनी जरूरत के अनुसार गांव में कुएं हों, जिनसे गांव के सब लोग पानी भर सकें। सब के लिए प्रार्थना-घर या मंदिर हों, सार्वजनिक सभा वगैरा के लिए एक अलग स्थान हो, गांव की अपनी गोचर-भूमि हो, सहकारी ढंग की एक गोशाला हो, ऐसी प्राथमिक और माध्यमिक शालायें हों जिनमें उद्योग की शिक्षा सर्व-प्रधान वस्तु हो और गांव के अपने मामलों का निपटारा करने के लिए एक ग्राम-पंचायत भी हो। अपनी जरूरतों के लिए अनाज, साग-भाजी, फल, खादी खुद गांव में ही पैदा हों। एक आदर्श गांव की मेरी अपनी यह कल्पना है।

—महात्मा गांधी

कहानी

सुनीता का सपना

✍ रामदेव शुक्ल

"सुनो, मैं सज संवरकर हाथ में चाय की ट्रे लेकर सिर पर हल्का घूंघट डाले, लजाती सुकुचाती हुई मन्दचाल से गजगामिनी प्रियदर्शिनी बनकर उसके पास जाऊं और वह मुझे अपनी टटोलती आंखों से कुरेद-कुरेद कर देखे, उसके बाद मेरे भाग्य का फैसला करे, यह मैं नहीं होने दूंगी।" कहकर सुनीता चुप हो गयी। कोई दूसरी युवती होती तो इतनी अप्रिय बात अपनी मां से कहती हुई सहमती या उत्तेजना में हांफ जाती, चेहरा लाल हो जाता, पर सुनीता वैसे ही शांत बनी रही जैसे उसने मां से यह कहा हो कि मां आज परांठे नहीं बनाकर नाश्ते में खिचड़ी बना लेती हूं। सुनीता यों भी प्रकृति से शान्त है और न भी होती तो हिन्दुस्तानी समाज के मध्यवर्गीय संस्कारों की जंजीर से बंधे परिवार में किसी बेटी की औकात ही क्या है जो शान्त न रहे। सुनीता को पढ़ाई लिखाई ने, उसकी शिक्षा ने, उसको मिलने वाले आदर और विश्वास ने उसके भीतर ऐसा प्रबल आत्म-विश्वास भर दिया है कि वह कभी उत्तेजित नहीं होती। लेकिन उसकी मां क्या करे? वह बेचारी तो पढ़ी-लिखी नहीं है। सीधी, सरल, शान्त एक ऐसी घरेलू औरत है जो पति और बच्चों के अलावा इधर-उधर कभी कुछ सोच ही नहीं पाती। उसकी आचार-संहिता स्वयं अपनी बनाई हुई है, जिसमें कोई संशोधन संभव नहीं। सुनीता की मां, उसका एकमात्र परिचय है। बच्चे तो सुनीता के बाद चार हुए, पर उसका नाम है "सुनीता की मां"। सुनीता के आसपास के परिवारों में जो पति हैं उनके मन में कुछ थोड़ी सी जो कल्पनाएं थीं वे धीरे-धीरे सूख गयी हैं। उन्हें अपने परमेश्वर होने का कोई मुगालता नहीं है पर उनकी पत्नियां उन्हें परमेश्वर मानती हैं। इस मान्यता में फर्क तब भी नहीं पड़ता, जब वे पति के पशुवत क्रोध का शिकार होती हैं। यह तो सुनीता के एम. ए. पास कर लेने के बाद हुआ है कि इस परमेश्वर को पशु बनने का साहस नहीं होता। सुनीता की मां के लिए वे परमेश्वर के आसन से नीचे नहीं उतरे। तो इसी कल्पित सिंहासन की छाया में वह आचार संहिता विकसित हुई है जिसमें गृहलक्ष्मी को प्रसाद का नहीं सबके खा लेने पर बचे जूठन को खाने का ही अधिकार होता है। कोई चीज कभी बहुत अच्छी बन गयी तो सब लोग चटखारे लेकर खाएंगे। गृहलक्ष्मी तब तक परोसती चली जाएगी जब वह चीज बिल्कुल खत्म न हो जाए। कई दिन बाद जब उस चीज की तारीफ होगी और कोई बच्चा कहेगा—"उस दिन वह चीज कितनी अच्छी बनी थी? सच है न मां?" तो गृहलक्ष्मी चुपचाप मुस्कराकर अनुमोदन कर देगी। यह बात तो कोई जाना ही नहीं पाएगा कभी कि गृहलक्ष्मी ने उस दिन वह चीज चखी ही नहीं थी।

खैर सुनीता ने जैसे इस घर की जड़ता को कई जगह से तोड़ा है, उसी तरह गृहलक्ष्मी की जूठन-निर्भरता को भी तोड़ दिया है। वह कहती है कि जब तुम्हारे दम पर ही घर भर को अपने-अपने ढंग से मौज-मस्ती का अवसर मिलता है, जब तुम्हीं सब कुछ करती-सहेजती , खटती हो तो तुम्हारा स्वास्थ्य सबसे पहले जरूरी है। उसके लिए जरूरी है समय पर खाना पीना और थोड़ा आराम। तब भी सुनीता की मां इस घर के चौके की देहरी भर है, उन्हें किसी महत्वपूर्ण निर्णय में शरीक होने का अधिकार लगभग नहीं है। इसके लिए उनके मन में न दुःख है, न क्रोध, न कोई उत्सुकता। सारे निर्णय जब तक जीवित थे, तब तक उनके ससुर करते थे। उनके मरने के बाद उनके पति करते हैं। उन्हें पति के निर्णय को विरोध करने की जरूरत भी नहीं पड़ती क्योंकि सुनीता के पापा घरेलू किस्म के मर्द हैं जो कमाने खाने और कुछ जरूरी जिम्मेदारियां-निपटाने से हटकर दाहिने बांये नहीं चलते। उनका काम बहुत पेचीदा नहीं है और आमदनी बहुत ज्यादा न हो तो बहुत कम भी नहीं है। तीनों बेटियों के नाम से रेकरिंग डिपाजिट का प्रबन्ध कर रखा है। दोनों बेटों के नाम भी बहुत छोटी रकम के ही सही, पर खाते खोल दिये गये हैं। उन्होंने अपने रिटायर होने तक की योजना बना डाली है। उनके हिसाब से रिटायर होने के बाद भी कोई खास दिक्कत नहीं आने वाली। वे लगभग निश्चिंत रहने वाले जीव हैं। उनकी चिन्ता केवल बेटियों के ब्याह को लेकर है, जो हर बार कुछ बढ़ जाती है, जब वे अपने समाज की किसी बेटी के जलने की कथा सुनते हैं। या सुनीता के विवाह का प्रस्ताव करने पर तीन-चार लाख की मांग का सामना करते हैं। एक बात का दृढ़ निश्चय उन्होंने शुरू में ही कर लिया था कि पांचों बच्चों को पूरी शिक्षा देंगे। इसीलिए बड़ी बेटी सुनीता का विवाह हाई स्कूल के बाद ही कर देने की अपने पिता की इच्छा का उन्होंने विरोध किया था। उनके पिता यह कहते-कहते मर

गये कि पोती का ब्याह देखने की साध मन में ही रह गयी। सुनीता के पापा ने एम. ए. पास करा लेने के बाद ही उसका ब्याह करने का अपना फैसला बदला नहीं था। अपने पति के इस फैसले का विरोध सुनीता की मां ने दबी जबान से किया था। इस बात में उन्होंने ससुर का साथ देना चाहा था पर न कोई वश उनका चला था, न उनके ससुर का। अब सुनीता की मां सोचती हैं कि बहुत अच्छा हुआ कि उनकी बात नहीं मानी गई और सुनीता इतनी योग्य निकली।

सुनीता की मां की कोख का पहला फल है सुनीता, इसको वे बहुत गर्वगुमान से कहती हैं। सुनीता रूप, गुण, विद्या, बुद्धि, विनय सब में अपूर्व है। उससे बात करने वाले व्यक्ति स्त्री हों या पुरुष, बच्चे हों या वृद्ध सब प्रभावित हो जाते हैं। सुनीता की मां को अपनी इस बेटी से बड़ा सुख मिला है। कुछ सुख के स्वाद तो ऐसे हैं, जिन्हें चखने का सौभाग्य शायद ही उसके परिचित समाज में किसी को मिला हो। एक बार जब सुनीता महिला महाविद्यालय में सबसे अधिक नम्बर ले आई थी तो महाविद्यालय में उसकी मां का भरी सभा में अभिनन्दन किया गया था।

सैकड़ों बच्चे, दर्जनों अध्यापिकाएं, प्रबन्ध समिति के सदस्य, अध्यक्ष, मंत्री, कुछ विशिष्ट नागरिक सुनीता की सफलता का श्रेय सुनीता की मां को दे रहे थे। उन्हें कई महिला अध्यापिकाओं और छात्राओं ने फूलों के हार पहनाये। प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष ने उन्हें शाल भेंट की। उनके गुणों की प्रशंसा की गई। कई भाषण हुए। जब उनसे कहा गया कि आप कुछ बोलें तो वे पानी-पानी हो गईं। आंखों से झरते आंसुओं से, भरे गले से और हिचकियों से सिर्फ इतना कह सकीं कि "मैं बेपढ़ी-लिखी हूं। सुनीता जो कुछ भी है, अपनी मेहनत से है और आप लोगों के आशीर्वाद से है।" तालियों की जो गड़गड़ाहट देर तक होती रही थी, वह सुनीता की मां के रक्त में आज भी रह-रहकर बज उठती हैं। उसके बाद सुनीता को सफलता पर सफलता मिलती गयी। वह रिसर्च पूरी करके उसी महाविद्यालय में लेक्चरर हो गयी।

उसके पापा ने घोषणा की कि "अब सुनीता का ब्याह कर देना है।" सुनीता ने, सहजता से पूछा था—"क्या ऐसा नहीं हो सकता कि मैं ब्याह न करूं?" पिता प्रचण्ड हो गए थे। गरज कर बोले थे—"कान खोलकर सुन लो। आज तक तुम्हारी सब बात मानता रहा हूं। यह बात तुम्हें माननी होगी। हमारे समाज में बेटी का पिता बेटी को योग्य बनाकर ही मुक्त नहीं होता, उसका विवाह करके मुक्त होता है"। सुनीता ने कोई प्रतिवाद नहीं किया। उसके पापा को बहुत दौड़ भाग नहीं करनी पड़ी। समाज में संभ्रांत समझे जाने वाले परिवार में उसके विवाह की बात चली। एक लाख नकद और स्कूटर, फ्रिज की दक्षिणा की मांग की गई। इसके अलावा पचहत्तर हजार और खर्च। दो लाख का बजट तो तैयार किया ही गया था।

सुनीता के पापा लौट आए थे। प्रसन्न थे कि अपने समाज के एक सम्पन्न परिवार में रिश्ता तय हो रहा था। लड़का इंजीनियर हो गया है। सुन्दर है। पर. . .कहते कहते वे रुक गये थे। सुनीता अब तक चुप थी। इस "पर" चुप न रह सकी। मां की ओर देखा। उसकी आंखों में प्रश्न चमक उठा था। सुनीता ने धीरे से पूछा था. . ."पर क्या पापा?" कुछ देर हिचक कर वे बोले थे...."लड़के की एक बात मुझे अच्छी नहीं लगी कि वह दहेज के आइटम खुद ही तय करने लगा था। बोला "मेरे दोस्त को एक कार मिल रही है। आप कम से कम इसका ख्याल तो रखिए।" यह बात बताकर पापा कुछ मायूस हो गए थे। फिर कुछ सोचते हुए बोले थे... "लेकिन सभी आजकल ऐसे ही हैं बेटी। मैं इन्तजाम कर लूंगा। तुम चिन्ता मत करो।"

सुनीता ने तभी एक निश्चय कर लिया था मन ही मन। आज ही वह इंजीनियर साहब उसे देखने आने वाले थे। घर में उत्सव जैसा माहौल था। पापा दफ्तर से छुट्टी लेकर प्रतीक्षा कर रहे थे। मां, बहनें, भाई सब घर की सफाई और खाने-पीने की तैयारी में जुटे थे।

तभी सुनीता ने मां को अपना निर्णय सुनाया। मां सहम गई। बेटी की तेजस्विता का आतंक मां पर था ही, आज यह क्या करेगी, सोचकर घबराई। पर सुनीता कुछ भी ऐसा वैसा नहीं करेगी... इसका गहरा विश्वास भी उन्हें था। धीरे से उन्होंने कहा..."ठीक है। तू जैसा उचित समझना, वैसा करना।" कहकर वह अपने काम में लग गई।

सुनीता बिना किसी घबराहट के सोचती रही कि क्या किया जाए। उसके मन में आने वाले इंजीनियर की कोई छवि बन नहीं पा रही थी। अपने पापा के सौन्दर्य बोध का उसे कुछ-कुछ अन्दाजा था। उनकी पसन्द की और चीजों के आधार पर वह अपने भावी पति की एक काल्पनिक तस्वीर बनाने लगी। वह तस्वीर कहीं से भी मूर्त रूप नहीं ले पा रही थी, तभी उसकी सहयोगी एक अन्य अध्यापिका मिलने आ गयी। उसे पता था कि आज सुनीता को देखने के लिए कोई आने वाले हैं। उसने मजाक में ही कहा कि

"ब्यूटी पार्लर क्यों नहीं हो आती?" सुनीता का सौन्दर्य कहीं से भी लंगड़ा नहीं था कि वह मेकअप की बैसाखी का सहारा लेती पर अपनी मां से उसने कहा "ठीक है मैं ब्यूटी पार्लर जा रही हूं और समय से आ जाऊंगी।" मां को आश्चर्य हुआ, पर बेटी की इस समझदारी पर प्यार भी उमड़ आया। सुन्दर लगने की चिर परिचित नारी-भावना के साथ बेटी के इस निर्णय को जोड़कर वह प्रसन्न हुईं।

सुनीता अपनी सहेली के साथ उसके घर चली गई। दो घंटे वहीं गपशप करने के बाद वह तब लौटी तो उसका अनुमान था कि उसके पारखी पधार चुके होंगे। उसका अनुमान सही निकला। वे लोग आ चुके थे। चाय नाश्ता करने के बाद अपनी होने वाली सालियों से कुछ हंसी मजाक कर रहे थे। पापा नहीं थे। सुनीता समझ गई कि वे उसी की खोज में निकले होंगे। इससे उसका आत्मविश्वास बढ़ गया। वह सीधी बाहर वाले कमरे में पहुंची। उसकी बहनें चहक उठीं...दीदी आ गई।

सुनीता सहज गति से चलकर अपने भावी पति के सामने बैठ गई। उनकी ओर भरपूर निगाह से देखा। औसत युवक, मुंह में पान के रस से रंगे मोटे होंठ। आंखे अचरज से फैली हुई। चेहरे पर घबराहट तो नहीं पर ऐसा कुछ भाव अवश्य था कि जिसके लिए वह आदमी तैयार होकर आया था, उससे कुछ अलग देख रहा है। सुनीता पूरी सहजता से देख रही थी। उधर उसे देखने आया हुआ युवक साफ अनुभव कर रहा था उसे ही बारीक निगाह से देखा जा रहा है। कहां तो उसने आधे घूंघट में सहमी सकुची सुन्दरी की कल्पना की थी जो हाथों में चाय की ट्रे लिए लजाती हुई उसके पास आकर कुछ पल ठिठक कर खड़ी रहेगी। वह मुस्कराकर कहेगा..."बैठ जाइए"। तब वह सहमती हुई बैठेगी। वह पूछेगा..."आपका नाम क्या है?" वह लाज से लाल हो जाएगी, वह मुस्कराएगा।

"आपका सपना क्या है?" कई पल बाद वह समझ गया कि यह सवाल उसी से पूछा जा रहा है। वह क्या उत्तर दे? बोलना जरूरी है, समझकर उसने कहा, "कैसा सपना?" "आप जीवन में जो कुछ करने वाले हैं, उसकी कोई स्पष्ट धारणा है आपके मन में? सुनीता ने समझाकर पूछा। जीवन में ...वो, नौकरी तो मिल ही जाएगी।" वह हल्का सा हकलाया। कभी इस तरह के सवाल पर तो सोचा ही नहीं था। "नौकरी न मिले तो? आप तो इंजीनियर हैं?" सुनीता ने इंजीनियर शब्द पर जोर दिया।

"नौकरी क्यों नहीं मिलेगी। वह तो मिल ही जाएगी।" युवक में आत्मविश्वास लौट रहा था।

"किस विभाग में करना चाहेंगे? इंजीनियर लोग तो बिजली विभाग को विशेष पसन्द करते हैं?" सुनीता सहजता से बोली। "हां, वह तो है। बहुत अच्छा विभाग है।" युवक सहज होने लगा था। बस परेशानी यह थी कि उसे जवाब देना अटपटा लग रहा था। "उसमें आमदनी बहुत अच्छी है" सुनीता का व्यंग्य न समझ पाने के कारण युवक की आंखों में सहमति की चमक उभरी।

"तो पहले एक बड़ा मकान बनवाएंगे, या पहले नई कार लेंगे?" "देखा जायेगा, पहले नौकरी तो मिले।"

"तो आपका सपना है एक बंगला, एक अच्छी गाड़ी और ..." सुनीता ने वाक्य अधूरा छोड़ दिया।

"ऐसा सोचकर ही तो मां बाप ने इंजीनियर बनाया है।" वह अपने उत्तर से सन्तुष्ट था, ऐसा लगा।

"समाज और राष्ट्र को लेकर भी कोई सपना है?" कहती हुई सुनीता मुस्करा पड़ी। युवक चौंक गया इस अटपटे सवाल से। "आप जानते हैं कि इंजीनियर लोगों का दाम शादी के बाजार में कितना है? चार पांच लाख तो कम से कम। फिर आपके मां बाप आपकी शादी में दो लाख से कुछ कम में क्यों रहे हैं?" युवक के चेहरे का भाव कुछ असहज होता जा रहा था। उसकी भौंहों की सिकुड़न उसके क्रोध की सूचना देने लगी थी। मन ही मन वह अपने घर में लोगों की बातचीत में मास्टरों की बुद्धि के विषय में की गयी टिप्पणियों को याद करके उनसे सामने बैठी युवती की तुलना करने लगा था। जान बूझकर ही उसके कोई उत्तर देना जरूरी नहीं समझा।

सुनीता मुस्कराती रही। बात को एक परिणति तक पहुंचा देने के लिए उसने कहा... मेरी नौकरी है। हर महीने दहेज की निश्चित रकम। इसलिए इतना सस्ता दाम आपका लगाया जा रहा है। वरना चार, पांच लाख...।

युवक ने स्पष्टतः अपमानित महसूस किया पर वह इतना बेवकूफ साबित नहीं होना चाहता था। यह बात सच है कि कमाने वाली बहू के नाम पर ही उसके मां बाप ने रकम कम की थी। लड़की के कुल खानदान, रूप-गुणशील की प्रशंसा जिस तरह उसने सुनी थी वह बिल्कुल ठीक निकल रही थी, पर इस तरह बोलने वाली पत्नी? "चलेगी", उसके मन ही मन इस दोष से समझौता कर लिया। "अच्छा, आपको मेरे साथ रिश्ता करना पसन्द है?" सुनीता पूरी तरह सहज बनी हुई थी।

(शेष पृष्ठ 41 पर)

सुनिश्चित रोजगार योजना

एस. पी. चौहान*

ग्रामीण क्षेत्रों में विशेषकर उन दिनों जब खेती का काम बहुत कम होता है, रोजगार के अवसर जुटाना आवश्यक हो जाता है। साल में लगभग सौ दिन ऐसे होते हैं, जब अकुशल श्रमिकों को खेती तथा खेती से जुड़े काम-धन्धों में रोजगार नहीं मिल पाता है। इस बात ने और हर योजना में पिछली योजना की तुलना में बेरोजगारों की संख्या में होती हुई लगातार बढ़ोतरी ने देश के नीति-निर्माताओं को रोजगार की तरफ और अधिक ध्यान देने पर विवश किया। अतः आगामी दस वर्षों में बेरोजगारी को घटाकर नगण्य स्तर पर लाने का लक्ष्य रखा गया।

प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव ने 1993 के स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर अपने भाषण में सुनिश्चित रोजगार योजना की घोषणा की जिसका उद्देश्य देश के पिछड़े क्षेत्रों में सर्वाधिक जरूरतमंदों की क्रय शक्ति को निरंतर बनाए रखना है। यह योजना गोवा, पंजाब, चंड़ीगढ़, दिल्ली और पांडिचेरी को छोड़कर देश के 23 राज्यों और चार केन्द्र शासित प्रदेशों के 261 जिलों के चुने हुए 1778 पिछड़े ब्लाकों के ग्रामीण इलाकों में 2 अक्तूबर, 1993 से चल रही है। ये ब्लाक मुख्यतया सूखा-संभावित क्षेत्रों, रेगिस्तानी इलाकों, जनजातीय क्षेत्रों और पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित हैं जो संशोधित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत आते हैं।

सुनिश्चित रोजगार योजना और जवाहर रोजगार योजना में अन्तर

सुनिश्चित रोजगार योजना जवाहर रोजगार योजना की उप-योजना नहीं है। यह एक पूर्णतया भिन्न योजना है, जिसे केन्द्र-समर्थित योजना के रूप में चलाया जा रहा है। इस योजना का खर्च केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा 80 : 20 के अनुपात में वहन किया जाता है। जवाहर रोजगार योजना के विपरीत सुनिश्चित रोजगार योजना के अन्तर्गत जहां-जहां रोजगार की आवश्यकता महसूस की जाती है निर्माण कार्य शुरू किए जाते हैं। दूसरे शब्दों में यह मांग पर आधारित एक योजना है। गांवों में रहने वाले निर्धनों की दो बुनियादी आवश्यकताएं होती हैं रोजगार का आश्वासन और भोजन का आश्वासन। सुनिश्चित योजना उन लोगों को रोजगार उपलब्ध कराती है जिन्हें रोजगार की जरूरत होती है और जो इसकी तलाश में होते हैं।

सुनिश्चित रोजगार योजना का मूल उद्देश्य ग्रामीण इलाकों में रहने वाले शारीरिक रूप से समर्थ ऐसे सभी वयस्कों को खेती के खाली दिनों में लाभप्रद मजदूरी उपलब्ध कराना है, जिन्हें रोजगार की आवश्यकता है और जो इसके इच्छुक भी हैं, लेकिन जिन्हें इन खाली दिनों में खेती में या सम्बद्ध काम धन्धों में या सामान्य योजना या गैर-योजना निर्माण कार्यों में काम नहीं मिल पाता है। स्थायी रोजगार और विकास के लिए आर्थिक आधारभूत सुविधा तंत्र और सामुदायिक परिसंपत्तियों का निर्माण करना इस योजना का दूसरा लक्ष्य है। वैसे तो योजना से वे सभी लोग लाभ उठा सकते हैं जो उस क्षेत्र विशेष में रहते हैं लेकिन वास्तव में इसका लक्ष्य उन व्यक्तियों को लाभ पहुंचाना है जो गरीब हैं, जरूरतमंद हैं और रोजगार की तलाश में हैं।

स्थायी परिसम्पत्तियों का निर्माण

यह योजना ऐसे निर्धन ग्रामीणों को 100 दिन के लिए अकुशल मजदूरी के काम का रोगजार उपलब्ध कराएगी जिन्हें रोजगार की जरूरत है और जो रोजगार पाने के लिए प्रयत्नशील भी हैं। सौ दिनों के रोजगार का आश्वासन 18 वर्ष से 60 वर्ष के आयु वर्ग के स्त्री-पुरुषों के लिए उपलब्ध है जो सामान्यतया सुनिश्चित रोजगार योजना की परिधि में आने वाले ब्लाकों के गांवों में रहते हैं। योजना के अन्तर्गत प्रत्येक परिवार के अधिकतम दो वयस्कों को 100 दिनों के रोजगार का आश्वासन दिया जाता है। यदि पहले ही से चालू योजना व गैर-योजना निर्माण कार्यों में रोजगार मौजूद हो तथा उन्हीं के जरिए रोजगार दिया जा सकता हो, तो नए निर्माण कार्य शुरू नहीं किए जाते। सुनिश्चित रोजगार योजना के अन्तर्गत रोजगार प्राप्त करने के इच्छुक व्यक्तियों को क्रियान्वयन एजेंसी द्वारा सम्बद्ध ब्लाक के भीतर ही इस उद्देश्य से प्रस्तावित निर्माण कार्यों में से किसी कार्य पर रोजगार दिया जाना चाहिए। यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि इस योजना के अन्तर्गत प्रदत्त रोजगार से ब्लाक क्षेत्र में स्थायी उत्पादक मूल्य की परिसम्पत्तियों का निर्माण हो।

योजना के अन्तर्गत निर्माण कार्य केवल खेतीबाड़ी की दृष्टि से खाली दिनों में ही शुरू किया जाना चाहिए। क्योंकि यह ऐसा

* निदेशक, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली

काम होगा जब संबंधित जिलों में खेतीबाड़ी के सामान्य काम-काज नहीं किए जा रहे होंगे। राज्य सरकारें सम्बद्ध जिलों में खेतीबाड़ी के खाली दिनों की अवधि तय करेंगी जिसके दौरान ही जरूरतमंद लोगों को रोजगार देने के लिए योजना के अंतर्गत निर्माण कार्य शुरू किए जाएं या जारी रखे जाएं।

योजना की शुरूआत के लिए प्रत्येक ब्लाक में सवा छः लाख रुपये जारी किए गए थे। खाली दिनों की अवधि में कार्य-स्थलों पर मजदूरों की हाजिरी तथा जिलों को पहले दिए गए धन के उपयोग की प्रगति के आधार पर जिलों को और धन जारी किया जाता है। योजना के अन्तर्गत केन्द्रीय सहायता सीधे ही जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों या जिला परिषदों को प्रदान की जाती है। केन्द्र द्वारा अपना हिस्सा जारी किए जाने के एक पखवाड़े के भीतर राज्यों को अपना हिस्सा जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों या जिला परिषदों को देना होता है।

कोई ठेकेदार नहीं

जिलाधीश या जिले का उपायुक्त सुनिश्चित रोजगार योजना के क्रियान्वयन के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार होता है। जिले के विभिन्न ब्लाकों के काम के समन्वय और धन के आवंटन का दायित्व उसी का होता है। जिले की विभिन्न क्रियान्वन एजेंसियों को निर्माण कार्य का आवंटन भी उसी का दायित्व होता है। जिला स्तर पर विभिन्न विकास विभागों के प्रमुखों को जिले की क्रियान्वयन एजेन्सियों का प्रमुख बनाया जा सकता है। संभागीय आयुक्तों और एजेंसियों के विभागाध्यक्षों को क्रियान्वयन पर पूरी तरह से नजर रखनी चाहिए। सुनिश्चित रोजगार योजना के अन्तर्गत होने वाले निर्माण कार्य सही ढंग से और कारगर तरीके से सम्पन्न किए जाएं, इसके लिए उन्हें सतर्कता बरतनी चाहिए और अनुशासन संबंधी अधिकारों का इस्तेमाल करना चाहिए। सभी निर्माण कार्य, विभिन्न क्रियान्वयन एजेंसियों के जरिए विभागीय तौर पर ही कराए जाने होते हैं तथा किसी भी स्थिति में क्रियान्वयन एजेंसियां इन कामों को ठेकेदारों से पूरा नहीं करा सकतीं।

ऐसे कार्यों को प्राथमिकता देनी होगी, जिससे स्थायी आधार पर रोजगार पैदा हो तथा क्षेत्र के सामाजिक आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण आधारभूत ढांचा विकसित हो। जल संभरण की दृष्टि से उपचार संयंत्रों, भू-संरक्षण, वनरोपण, कृषि-बागवानी, जल विभाजक विकास व लघु सिंचाई, तालाबों, वनीय चरागाहों के विकास, रिसाव तालाबों, ग्रामीण तालाबों, नहरों आदि के निर्माण कार्यों को प्राथमिकता दी जाती है। जिलों में सम्पर्क व्यवस्था को मजबूत बनाने के मास्टर प्लानों के आधार पर सड़कों, आपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना के नमूनों पर प्राथमिक स्कूलों के भवनों और आंगनवाड़ी भवनों के निर्माण का काम भी सुनिश्चित रोजगार योजना के अंतर्गत हाथ में लिया जा सकता है।

जिले के क्रियान्वयन अधिकारी (जिलाधीश) को सभी क्रियान्वयन एजेन्सियों से प्रति वर्ष अक्तूबर तक जिले में चालू तथा अगले वर्षों में उनके द्वारा प्रस्तावित निर्माण कार्यों का ब्लाक वार ब्यौरा ले लेना चाहिए। इन विवरणों के आधार पर जिलाधीश उत्पादक निर्माण कार्यों की एक सूची तैयार करेगा, जिसमें (क) सामान्य योजना/गैर योजना बजट में ब्लाक वार निर्माण कार्यों तथा (ख) प्रत्येक ब्लाक क्षेत्र में सुनिश्चित रोजगार योजना के अंतर्गत शुरू किये जाने वाले नए निर्माण कार्यों को शामिल किया जाएगा। परियोजनाओं की सूची में शामिल किए गए निर्माण कार्य ऐसे होने चाहिए कि उन्हें दो वर्ष की अवधि में पूरा किया जा सके तथा उनका क्रियान्वयन प्रत्येक कार्य के मौसम में चरणबद्ध तरीके से विभाजित हो। परियोजनाओं की सूची तैयार करने का काम हर वर्ष दिसम्बर तक पूरा कर लिया जाना चाहिए।

सुनिश्चित रोजगार योजना के अन्तर्गत चालू किए गए सभी निर्माण कार्य श्रम-प्रधान होंगे। श्रम-प्रधान कार्य वे होते हैं, जिनमें अकुशल श्रमिकों की मजदूरी और उपकरण, सामग्री व अन्य कुशल कार्यों पर खर्च का अनुपात 60 और 40 का हो। जिन कामों में सीमेंट, लोहे आदि जैसी सामग्री की अधिक मात्रा में जरूरत पड़ती हो उन्हें सुनिश्चित रोजगार योजना के अन्तर्गत नहीं लिया जाना चाहिए। हां, यदि सामग्री संबंधी मद पर होने वाली अतिरिक्त लागत तथा अन्य क्षेत्रीय कार्यक्रमों के खाते से पूरी की जाए, तो ऐसे निर्माण कार्यों को योजना के अन्तर्गत लिया जा सकता है।

सुनिश्चित रोजगार योजना में रोजगार कैसे पाएं

इस योजना के अंतर्गत रोजगार पाने के इच्छुक 18 वर्ष से अधिक परन्तु 60 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों को अपना नाम उन ग्राम पंचायतों में दर्ज कराना चाहिए, जिनमें वे रह रहे हैं। योजना के दायरे में आने वाले ब्लाकों की प्रत्येक ग्राम पंचायत को ऐसे रजिस्टर रखने होंगें जिनमें पंजीकृत व्यक्तियों के नाम तथा अन्य विवरण लिखें जायेंगे। पति, पत्नी, बच्चों व अन्य

आश्रितों वाले प्रत्येक परिवार को जिसके वयस्कों का योजना के अन्तर्गत रोजगार के लिए नाम दर्ज किया गया है, तत्काल एक परिवार कार्ड जारी किया जाएगा। इस कार्ड में परिवार के सदस्यों का ब्यौरा तथा प्रत्येक पंजीकृत व्यक्ति को सुनिश्चित रोजगार योजना या अन्य योजनाओं या गैर योजना के कार्यक्रमों के अन्तर्गत मंजूर निर्माण कार्यों का ब्यौरा मौजूद होता है। सुनिश्चित रोजगार योजना के अंतर्गत होने वाले निर्माण कार्यों में परिवार कार्ड में दर्ज अधिकतम दो वयस्कों को, जब भी उन्हें जरूरत होगी, रोजगार दिया जाएगा। आवेदन पत्रों की प्रतियां पंचायत में उपलब्ध होनी चाहिए। किसी भी दशा में श्रमिक को ये आवेदन पत्र बाहर से खरीदने के लिए नहीं कहा जाएगा। जब भी कभी ऐसे कम से कम 20 वयस्क, जिनके नाम परिवार कार्डों में दर्ज हैं, खाली दिनों में काम मांगेंगे तब खंड विकास अधिकारी द्वारा उन्हें क्षेत्र में सुनिश्चित रोजगार योजना के अन्तर्गत नए काम चालू करके विभागीय या अन्य प्रकार के निर्माण कार्यों में रोजगार उपलब्ध कराया जाएगा। लेकिन, यदि ऐसे दस व्यक्ति भी रोजगार मांगें तब भी खंड विकास अधिकारी अपने विवेकानुसार योजना के अन्तर्गत नए निर्माण कार्य शुरू कर सकता है, लेकिन उसे यह सुनिश्चित करना होगा कि 30 दिनों के भीतर, ऐसा शुरू किया गया काम पूरा हो जाए। नए निर्माण कार्य शुरू करने के बारे में जिलाधीश खंड विकास अधिकारियों को निर्देश तथा परामर्श प्रदान करेगा। सुनिश्चित रोजगार योजना के अन्तर्गत दी जाने वाली मजदूरी, सम्बद्ध राज्य सरकार द्वारा अकुशल श्रमिकों के लिए स्वीकृत न्यूनतम कृषि मजदूरी होनी चाहिए। समान कार्य या समान स्वरूप के कार्यों के लिए स्त्री और पुरुष को समान मजदूरी दी जाएगी। मजदूरी का एक हिस्सा अनाज के रूप में दिया जा सकता है, लेकिन यह हिस्सा प्रति दिहाड़ी दो किलोग्राम से अधिक नहीं होगा और लागत के हिसाब से मजदूरी के आधे से अधिक नहीं होगा। अनाज के रूप में मजदूरी का भुगतान वैकल्पिक होगा। योजना का उद्देश्य यह है कि मजदूरों को अनाज ऐसे मूल्यों पर मिल सके जो समय-समय पर भारत सरकार द्वारा संशोधित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लिए अधिसूचित मूल्यों से अधिक न हो।

सुनिश्चित रोजगार योजना के अन्तर्गत शुरू किए जाने वाले सभी निर्माण कार्य श्रम-प्रधान होते हैं और ये ''मस्टर रोल'' पर नहीं होते। निर्माण कार्यों की गुणवत्ता बनाए रखना और मजदूरी के भुगतान में निर्धारित दरों का कड़ाई से पालन अत्यंत आवश्यक है। इस उद्देश्य के लिए राज्य सरकारें, पर्यवेक्षण स्तर के प्रत्येक अधिकारी के लिए राज्य से ब्लाकों के दौरों की न्यूनतम संख्या निर्धारित करेंगी तथा यह सुनिश्चित करेंगी कि अधिकारी ये दौरे अवश्य करें। क्रियान्वयन एजेंसियां, यह सुनिश्चित करने के विशेष प्रयास करेंगी कि कम उत्पादक, निर्माण कार्यों को बढ़ावा न दिया जाए। सुनिश्चित रोजगार योजना के अंतर्गत किए जाने वाले निर्माण कार्यों को लम्बी अवधि तक अधूरे कामों के रूप में लटकने नहीं दिया जाना चाहिए और न ही कामों को बीच में ही अधूरा छोड़ा जाएगा।

जिस भी जिले में सुनिश्चित रोजगार योजना चलाई जा रही हो, राज्यों को वहां जिला सुनिश्चित रोजगार योजना समिति तथा योजना की परिधि में आने वाले प्रत्येक ब्लाक में ब्लाक सुनिश्चित रोजगार योजना समिति गठित करनी चाहिए। इस समिति के सदस्यों में क्रियान्वयन एजेंसियों के जिला-स्तरीय अधिकारियों, चुने हुए प्रमुख प्रतिनिधियों और गैर सरकारी संगठनों को शामिल किया जाना चाहिए। इसी प्रकार ब्लाक स्तर पर ऐसी समिति की क्रियान्वयन एजेन्सियों के ब्लाक स्तरीय अधिकारियों, प्रमुख निर्वाचित प्रतिनिधियों और गैर सरकारी संगठनों को सदस्य बनाया जाना चाहिए। अपने-अपने अधिकार क्षेत्रों में ये समितियां समय-समय पर दिए जाने वाले मार्गदर्शी निर्देशों के अनुसार सुनिश्चित रोजगार योजना के क्रियान्वयन पर निगाह रखेंगी तथा राज्य सरकारों को इन योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए प्रभावशाली उपाय सुझाएंगी। सम्बद्ध जिलाधीश और खंड विकास अधिकारी इन समितियों को उनकी सिफारिशों पर राज्य सरकार द्वारा की गई कार्रवाई से अवगत कराएंगे। प्रत्येक जिला स्तर समिति, जिले की ब्लाक स्तरीय सुनिश्चित रोजगार योजना समितियों के कामकाज में समन्वय बनाए रखेगी।

योजना के बारे में गांवों में व्यापक प्रचार अभियान चलाने की जरूरत है। योजना का ब्यौरा देने वाले पोस्टरों और पुस्तिकाओं का पंचायत कार्यालयों तथा गांव के अन्य सार्वजनिक स्थलों पर प्रदर्शन किया जाए।

योजना के अन्तर्गत 1993-94 में केन्द्र द्वारा राज्य सरकारों को उनके हिस्सों के रूप में 600 करोड़ रुपये आवंटित किए गए थे। 1994-95 में 1200 करोड़ रुपये के केन्द्रीय आवंटन का प्रावधान है। शुरू-शुरू में कुछ राज्यों को इस योजना के लिए धन जुटाने में कठिनाई आई। इसके अलावा कुछ राज्यों में खेती के

खाली दिनों की अवधि, आरम्भ में सुनिश्चित रोजगार योजना की क्रियान्वयन अवधि से पूरी तरह मेल नहीं खा रही थी। समस्याओं पर काबू पा लिया गया है और अब योजना ने गति पकड़ ली है। 1994-95 में 12000 करोड़ रुपये के प्रावधान से अब यह योजना पूर्ण रोजगार प्राप्त करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध होगी।

अनुवाद : जया ठाकुर,
बी-212, नानक पुरा,
नई दिल्ली-110021

सुनिश्चित रोजगार योजना

- आठवीं पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य बेरोजगारी को कम करने पर जोर देना तथा अगले दस वर्षों में लगभग समाप्त कर देना है।
- नई शुरू की गई सुनिश्चित रोजगार योजना का उद्देश्य गैर-कृषि मौसम के दौरान 100 दिनों का सुनिश्चित रोजगार उपलब्ध कराना है।
- इस योजना का विस्तार 1778 खंडों से बढ़ाकर 2279 खंडों में कर दिया गया है जो कि देश के कुल खंडों का 40 प्रतिशत है।
- इस योजना में शामिल सभी खंडों में संशोधित सार्वजनिक वितरण प्रणाली लागू है जिसमें खाद्यान्नों को सामान्य सार्वजनिक वितरण प्रणाली से कम मूल्य पर उपलब्ध कराया जाता है।
- सुनिश्चित रोजगार योजना के अंतर्गत शामिल क्षेत्र में रहने वाले वे सभी ग्रामीण लोग इस योजना का लाभ उठा सकते हैं जो जरूरतमंद हैं और जिन्हें काम की आवश्यकता है।
- सभी व्यक्ति जो इस योजना के अंतर्गत रोजगार चाहते हैं उन ग्राम पंचायतों में अपना पंजीकरण करायें जहां वे रहते हैं।
- सुनिश्चित रोजगार योजना के अंतर्गत शामिल खंडों में स्थित ग्राम पंचायतों को पंजीकृत लोगों के नाम और अन्य संबंधित सूचनाओं का रजिस्टर रखना चाहिए।
- 30 सितंबर, 1994 तक 97 लाख से ज्यादा व्यक्तियों ने रोजगार के लिये विभिन्न पंचायतों में पंजीकरण कराया है।
- प्रत्येक परिवार को जिसके वयस्क लोग रोजगार के लिये पंजीकृत हैं एक परिचय पत्र जारी किया जायेगा। इसमें परिवार के सदस्यों और प्रत्येक पंजीकृत व्यक्ति को दिये गये रोजगार की जानकारी होगी।
- मजदूरी का एक हिस्सा खाद्यान्न के रूप में दिया जा सकता है जो प्रत्येक कार्य दिवस के लिए दो किलोग्राम से अधिक नहीं होगा और साथ ही कुल मजदूरी के 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होगा।

योजना के अन्तर्गत दिया जाने वाला खाद्यान्न जहां तक संभव हो, कार्य स्थल पर ही दिया जाना चाहिए।

साभारः पत्र सूचना कार्यालय

ग्राम विकास और गांधी जी

डा. मदन केवलिया

गांधी जी दूरदर्शी राजनीतिज्ञ और अर्थशास्त्री थे। वे जानते थे कि जब तक तीन हजार किलोमीटर की लम्बाई और 2400 किलोमीटर की चौड़ाई में फैले गांवों की ओर पूरी तरह से ध्यान नहीं दिया जायेगा, तब तक भारत की अर्थनीति सम्बन्धी लम्बी चौड़ी बातें निरर्थक सिद्ध होंगी। उन्होंने गांव-गांव में उत्पन्न समस्याओं को प्रत्यक्षदर्शी के रूप में देखा, अपनी पदयात्राओं के दौरान उन पर विचार किया और माना कि जब तक अर्धनग्न और अर्द्धक्षुधित कृषकों की समस्याओं पर विचार कर उनका समाधान नहीं किया जायेगा, तब तक भारत की स्वतंत्रता अधूरी रहेगी। उन्होंने यह भी देखा था कि जमींदारी प्रथा का दानव छोटे किसानों और मजदूरों को निरंतर कुचलता जा रहा था। गांधी जी ने एक ओर तो जमींदारी प्रथा को पनपाने वाले तत्वों के विरुद्ध आवाज बुलन्द की तो दूसरी तरफ ग्राम विकास के लिए रचनात्मक कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

उन्होंने शोषकवर्ग को फटकारते हुए एक बार कहा था-"जब तक हम स्वयं अपने किसानों को लूट रहे हैं या औरों को लूटने दे रहे हैं, तब तक स्वराज्य पाने की हमारी तड़प सच्ची नहीं कही जा सकती। किसान ही हमारे दुःख विमोचन के सच्चे आधार हैं।" इस प्रकार बापू ग्राम-विकास के लिए कृषकों की स्थिति में सुधार लाना परमावश्यक समझते थे।

स्वावलम्बन के बिना विकास नहीं

गांधी जी जानते थे कि शहरों की भांति जब तक हमारे गांव स्वावलम्बी नहीं हो जाते, तब तक उनका पूर्णरूपेण विकास नहीं हो सकता। उनकी दृष्टि में नगरों की ओर भागने वाले ग्रामवासियों को यदि गांव में ही पर्याप्त जीविका और समुचित वातावरण उपलब्ध करा दिया जाए तो अनावश्यक शहरी जमाव रोका जा सकता है। गांव से नगर में पराश्रित होने की अपेक्षा ग्राम "स्वराज्य" में ही जीवन यापन के साधन प्राप्त करना वे ज्यादा उपयोगी समझते थे।

गांधी जी कहते थे--"ग्राम स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि प्रत्येक गांव सम्पूर्ण गणराज्य होना चाहिए, जो अपनी जीवन सम्बन्धी आवश्यकताओं के लिए अपने पड़ोसियों से स्वतन्त्र हो और फिर अन्य बहुत सी बातों में, जिनमें आश्रितता जरूरी है, वे एक-दूसरे पर निर्भर रहें। इस प्रकार प्रत्येक गांव का पहला काम यह होगा कि वह खाने के लिए अपना अनाज और कपड़े के लिए अपनी कपास उगाये। पशुओं के लिये उसका अपना चरागाह होना चाहिये और बालिगों तथा बच्चों के लिए मनोरंजन और खेलकूद के सामान होने चाहिये।" गांधी जी का विचार था कि गांजा, अफीम, तम्बाकू वगैरह के स्थान पर उपयोगी फसलें उगानी चाहिये।

हमारे गांव स्वास्थ्य एवं मनोरंजन की दृष्टि से भरे-पूरे नहीं हैं, इस बात को ध्यान में रखते हुए बापू ने "हरिजन" पत्र में लिखा था–"गांव की अपनी ग्राम नाटकशाला, पाठशाला और अपना सभा भवन होगा। उसकी अपनी पानी की योजना होगी, जिससे साफ पानी मिलता रहेगा।"

गांधी जी ग्राम विकास के लिये स्वदेशी वस्तुओं और उद्योगों के उपयोग पर विशेष बल देते थे। उनका विचार था कि सूत कातना, कागज बनाना, साबुन बनाना, गन्ने के रस से गुड़-शक्कर तैयार करना या गांव में ही उपलब्ध होने वाली वस्तुओं से चीजें तैयार करना ग्राम के विकास के लिये जरूरी है। चमड़ा रंगना, जूते बनाना, तेल निकालना आदि ऐसे छोटे ग्रामोद्योग हैं, जो किसानों को आत्मनिर्भर बनाने में सक्षम हैं।

सर्वोदय पर बल

गांधी जी की ग्रामोद्योग की यह धारणा मशीनों से प्रभावित लोगों को विशेष रुचिकर नहीं लगी। इसका स्पष्टीकरण करते हुए बापू ने कहा--"हम चाहे कितने भी बड़े-बड़े कारखाने क्यों न खोल दें, उनसे अपने देहातों की जनता में जागृति पैदा नहीं हो सकती है। वह जागृति केवल खादी और ग्रामोद्योग से ही हो सकती है। देहातों में जो चीजें नहीं बन सकतीं उन चीजों को पैदा करने के लिए कारखाने जरूर खोले जाने चाहिये।" इस प्रकार गांधी जी अपनी समन्वयवादी दृष्टि से गांव और शहर की खाई को पाटकर गांवों को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में निरंतर कार्य करते रहे। वे इस विषम स्थिति से भली भांति परिचित थे कि यदि नगरों में श्रम का केन्द्रीकरण हुआ तो गांव निरंतर कमजोर होते जाएंगे। इसलिये सब लोगों का उदय या "सर्वोदय" ही गांधी जी का लक्ष्य रहा।

गांधी जी के मतानुसार सर्वोदय का अर्थ आदर्श समाज व्यवस्था है। इस समाज व्यवस्था में सब बराबर के सदस्य होंगे, सबको मेहनत की पैदावार में हिस्सा मिलेगा। किसी भी व्यक्ति या समूह का दमन या शोषण नहीं किया जायेगा। यदि आदर्श ग्राम सेवक तैयार हो जाएं तो आनन-फानन में आदर्श गांव की स्थापना हो सकती है।

गांधी जी गांवों के स्वावलम्बन पर बराबर बल देते रहे। वे इस बात के लिए चिंतित थे कि हमारी लाचारी या स्वेच्छा से पैदा हुई बेकारी अवश्य मिटनी चाहिये। वह नहीं मिटेगी तो कोई रामबाण दवा काम नहीं देगी और अधभूखे लोगों की शाश्वत समस्या वैसी ही बनी रहेगी । जो दो मुट्ठी खाता है, उसे चार मुट्ठी पैदा करना चाहिये। ग्राम जीवन के साथ एकाकार हो जाने वाला व्यक्ति ही ग्राम समस्याओं को दूर कर उसका विकास करने में सफल हो सकता है।

बच्चों को व्यावहारिक शिक्षा देना जरूरी

गांधी जी ने ग्राम-विकास के लिये अक्षर ज्ञान की भी चर्चा की है। इस सम्बन्ध में उनकी धारणा यह रही है कि वर्णमाला को छूने से पहले बहुत-सा उपयोगी ज्ञान—मौजूदा हालात, इतिहास, भूगोल और प्रारम्भिक अंकगणित के बारे में—जबानी दिया जा सकता हैं। हाथों से पहले आंखों, कानों और जबान का नम्बर आता है। हमारे देश में सौ में से पच्चीस लोग खेती करते हैं और दस आदमी किसानों की जरूरतें पूरी करने का काम करते हैं। अतः खेती और हाथ की बुनाई को प्रत्येक बालक की अच्छी व्यावहारिक शिक्षा में जरूर शामिल करना चाहिये।

सिंचाई साधनों के संबंध में बापू कहा करते रहते थे कि इन का अधिकाधिक विकास होना चाहिये। गांधी जी कहते थे कि देश की नदियों की उपयोगिता बांध बांधकर की जा सकती है। इससे कम समय में अधिक खेती को पानी दिया जा सकता है और उपज में वृद्धि की जा सकती है।

गांधी जी बार-बार कहते थे कि ग्रामों के उत्थान में प्रत्येक भारतीय को गौरव समझना चाहिये। अस्पृश्यता दूर करके सम्प्रदाय और धर्म के भेदभाव मिटा सकते हैं। बापू प्रत्येक मनुष्य का सही भरण-पोषण चाहते थे। उनकी रामराज्य की भावना भी यही थी। इसके साथ ही वे यह भी कहते थे कि " गांव में जाने वाले किसी युवक को कठिनाइयों से घबराकर कभी अपना रास्ता नहीं छोड़ना चाहिये।" वे गांवों में पंचायती राज के समर्थक थे। वे मानते थे कि "जब गांवों का पूरा-पूरा विकास हो जायेगा, तो देहातियों की बुद्धि और आत्मा को संतुष्ट करने वाले कला के धनी स्त्री-पुरुषों की गांव में कमी नहीं रहेगी। बापू के शब्दों में—"यदि आदर्श गांव का मेरा स्वप्न पूरा हो जाय तो भारत के सात लाख गांवों गांव में से हर एक समृद्ध प्रजातंत्र बन जाएगा।"

पार्वती सदन,
जोशीवाड़ा,
बीकानेर-334005 (राज.)

गांवों में करने के कार्य ये हैं कि उनमें जहां-जहां कूड़े-करकट तथा गोबर के ढेर हों, वहां-वहां से उनको हटाया जाय और कुओं तथा तालाबों की सफाई की जाय। ... वहां के बाजार तथा गलियों को सब प्रकार का कूड़ा - करकट हटाकर स्वच्छ बना लेना चाहिये। फिर उस कूड़े का वर्गीकरण कर देना चाहिये। उसमें से कुछ का तो खाद बनाया जा सकता है, कुछ को सिर्फ जमीन में गाड़ देना भर बस होगा और कुछ हिस्सा ऐसा होगा कि जो सीधा सम्पत्ति के रूप में परिणत किया जा सकेगा।

—महात्मा गांधी

ग्रामीण विकास–प्रमुख उद्देश्य

गांव हमारी अर्थ व्यवस्था की रीढ़ की हड्डी है और देश की आर्थिक योजना तथा विकास योजनाओं में ग्रामीण निर्धनता उन्मूलन को प्राथमिकता के आधार पर रखा गया है।

महात्मा गांधी ने कहा था, "जब मैं गांवों को निर्धनता से बाहर निकाल लूंगा मुझे स्वराज मिल जाएगा।"

पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा स्वर्गीय इंदिरा गांधी द्वारा बनाई गई नीतियों तथा कार्यक्रमों में गांवों में निर्धनता के उन्मूलन को प्राथमिकता दी गई ताकि भारत का आर्थिक विकास किया जा सके।

स्वर्गीय श्री राजीव गांधी के समय में ग्रामीण विकास कार्यक्रम को विशेष प्रोत्साहन मिला। उन्होंने अपने शासन काल में देश से निर्धनता तथा बेरोजगारी आदि समस्याओं का उन्मूलन करने के लिए इस कार्यक्रम को चलाने वाली एजेसियों के मूलभूत ढांचे को नया स्वरूप दिया। उनके शब्दों में "गांवों में सुधार की अत्यंत आवश्यकता है..... ग्रामीण लोग गांवों से शहरों की ओर पलायन करने की बजाय गांवों में रहेंगे, गांवों में काम करेंगे तभी गांवों का विकास होगा। उन्होंने यह भी अनुभव किया लोगों को शिक्षित किए जाने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इससे लोग जागरूक, शिक्षित तथा सक्षम होंगे। इसके लिए उन्होंने ग्रामीण विकास के प्रयासों में व्याप्त कमियों को दूर करने के लिए विभिन्न निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम चलाए।

ग्रामीण विकास के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण

संसद के समक्ष अपने पहले भाषण में उन्होंने कहा था "भारत की अर्थ व्यवस्था किसानों पर आधारित है।" उनकी गहरी मान्यता थी कि राष्ट्र का विकास ग्रामीण विकास पर आधारित है। उन्होंने यह महसूस किया कि ग्रामीण विकास के लिए नए वैज्ञानिक दृष्टिकोण और आधुनिक तकनीक की आवश्यकता तो है ही, साथ ही आवश्यकता है ग्रामीण विकास के लिए सभी का सहयोग प्राप्त कर इसे पारम्परिक आधार प्रदान करने की। उनकी यह इच्छा थी कि लोग अपने-अपने गांवों के विकास के लिए स्वयं प्रयास करें तथा अपनी कठिनाइयों के लिये सरकार पर ही आश्रित न रहें। श्री राजीव गांधी समय-समय पर ग्रामीण इलाकों में गए, वहां के लोगों से बात की, उनकी समस्याओं को समझा तथा ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों में व्याप्त कमियों को जानकर उन्होंने उन कमियों और समस्याओं को दूर करने के लिए व्यापक कदम उठाए।

स्वर्गीय राजीव गांधी ने उत्पादन, बाजार तथा सेवाओं के बीच मजबूत संयोजन की आवश्यकता को महसूस किया। उन्हें यह आभास हुआ कि ग्रामीण विकास के लिए दिए गए संसाधनों का एक बड़ा हिस्सा कार्यकर्ताओं पर ही खर्च हो जाता है। उन्होंने ग्रामीण विकास से जुड़े अधिकारियों से विचार विमर्श किया और ज्वलंत सामाजिक समस्याओं से निपटने के लिए "तकनीकी मिशन" की स्थापना की।

स्वदेशी तथा उच्च तकनीक का सह-अस्तित्व

उन्होंने देश को खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्म-निर्भर बनाने में योगदान तो दिया ही, साथ ही छोटे उद्योगों के लिए नई तकनीक विकसित करने पर भी बल दिया। शिक्षा के विकास की जरूरत पर बल देने का उनका अभिप्रायः एक साथ शिक्षा, प्रौद्योगिकी, उत्पादकता तथा विकास से था। एक गूढ़ राजनीतिक, बुद्धिजीवी तथा प्रशासक होने के नाते उन्होंने मानव संसाधन विकास की जरूरत को पहचाना। उनका यह मानना था कि इससे मानव संसाधन विकास तथा विज्ञान प्रौद्योगिकी विषय में हो रहे विकास के बीच की खाई को कम किया जा सकता है। राष्ट्र को आधुनिक युग की ओर अग्रसर करते हुए उन्होंने बार-बार स्वदेशी की भावना को बढ़ावा देने की बात कही।

ग्रामीण मूलभूत ढांचे में सुधार

राजीव गांधी के सपने को देखते हुए और उसकी सत्यता को स्वीकार करते हुए सरकार ने ग्रामीण लोगों को विकास की राह पर अग्रसर करने का बीड़ा उठाया है। भारतीय अर्थ व्यवस्था के तेजी से परिवर्तन के दौर में ग्रामीण पुनर्निर्माण का कार्य कठिन तथा साथ ही साथ महत्वपूर्ण हो गया है। ग्रामीण निर्धनता के उन्मूलन के कार्य को जवाहर रोजगार योजना, सुनिश्चित रोजगार योजना, समन्वित ग्रामीण विकास योजना, ग्रामीण युवा स्वरोजगार योजना, प्रधानमन्त्री की रोजगार योजना तथा इसी प्रकार की कई अन्य योजनाओं की सहायता से वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान किया जा रहा है। इन योजनाओं का ग्रामीण ढांचे के अनुरूप पुनरीक्षण तथा इस कार्य को आम जनता के सहयोग से चलाने का प्रस्ताव है।

विकेन्द्रीकरण योजना

"जनता को सत्ता" का विचार उनके द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को सवैधानिक सत्ता प्रदान करने से सिद्ध होता है। मूलतः हमारे ग्रामीण भारत की क्रांतिकारी विशेषता पंचायती राज का सभी ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तार है। इससे सत्ता का विकेन्द्रीकरण हुआ तथा ग्रामीण संस्थाओं को और अधिक अधिकार व संसाधन प्राप्त हुए हैं।

यह राजीव गांधी ही थे जिन्होंने जिला स्तर के कार्यक्रमों को बनवाया तथा उन्हें सही दिशा दी। इसके अलावा जिला स्तर पर कार्यक्रमों का क्रियान्वयन लोगों की सहायता से जिला तथा स्थानीय संस्थाओं द्वारा किया जाना भी विचारों का ही स्वरूप था। उन्होंने सोचा कि सामाजिक क्षेत्रों द्वारा या उनकी सहायता से लोगों को शिक्षा, आवास, स्वास्थ्य की सुविधाएं मिलने के साथ-साथ जिला स्तरीय योजनाओं से रोजगार के अधिक अवसर पैदा होंगे और अतिरिक्त आय के मार्ग खुलेंगे। उन्होंने ग्रामीण विकास योजनाओं के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में व्यावसायिक प्रशासन की आवश्यकता पर बल दिया तथा प्रशासकों में गरीबों के उत्थान के लिए समर्पित हो जाने की भावना रखने पर बल दिया।

विश्व अर्थ व्यवस्था का पूरा लाभ हम तभी उठा सकते हैं जब पूंजी निवेश ग्रामीण क्षेत्रों में भी किया जाए। इसलिए सरकार तथा प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव ने केन्द्रीय योजना के अन्तर्गत आठवीं योजना में ग्रामीण विकास के लिए लगभग 30,000 करोड़ रुपये की राशि रखी है। यह वह समय है जब पूरे राष्ट्र को राजीव गांधी के सपने के अनुसार सभी की समृद्धि की योजना के लिए कार्य करना चाहिए।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

साक्षरता-गीत

✍ गिरिमोहन गुरु

साक्षर हो परिवार हमारा
पढ़े लिखें माताएं बहनें
साक्षरता के गहने पहनें
तब होगा उद्धार हमारा. . .
शिक्षित जन सब आगे आयें
दस अनपढ़ को एक पढ़ायें
तब सार्थक अभियान हमारा. . .

अनपढ़ की मत करो उपेक्षा
मन में हो समता की इच्छा
फैले साक्षरता उजियारा. . .
गूंजे गांधी जी की बानी
रहें न अब अनपढ़ अज्ञानी
दीवारों पर लिख दो नारा. . .
बिना पढ़ा जो भी हो तबका
झुग्गी झोपड़ पट्टी सबका
साक्षरता हो एक सहारा. . .

गोस्वामी सेवाश्रम,
हाउसिंग बोर्ड कालोनी,
होशंगाबाद (नर्मदापुरम्),
461001 (म. प्र.)

ग्रामीण विकास में दूर-संचार सेवाओं की भूमिका

✍ रेणु सिंह

नालंदा जिले का एक पिछड़ा गांव सुरगावां। इसे पक्की सड़क से जोड़ने का प्रयास सन् 1934 में शुरू किया गया था जो आज तक अधूरा ही है। डेढ़ मील के क्षेत्र में सड़क निर्माण का काम बाकी है। किन्तु राजीव सरकार की योजना के अनुसार वहां सौर-ऊर्जा पर आधारित एक सार्वजनिक टेलीफोन लग चुका है। 'इसके लिए जब दरख्वास्त दी जा रही थी तो लोग इसे फिजूल और अय्याशी का साधन बता रहे थे। पूछा जाता था इसका क्या इस्तेमाल होगा। किन्तु, इस वर्ष-फोन चालू होते ही महज डेढ़ हजार की आबादी वाले इस गांव में, सैकड़ों उपभोक्ता तैयार हो गये। इसे अय्याशी का साधन बताने वाले लोगों का भ्रम टूट गया।

ऐसा क्यों हुआ? क्योंकि इस तरह के फोन केवल इस गांव में नहीं बल्कि आस-पास के सभी प्रमुख गांवों और बाजारों में लग गए हैं।

ग्रामीणों के लिए फोन की उपयोगिता सिद्ध

इसलिए अब किसान भी अपनी उपज, बाजार भेजने से पहले बनियों से फोन पर सौदा कर लेते हैं। भाव ठीक होता है, तो गल्ला ले जाते हैं। नहीं तो अनुकूल भाव के लिए इन्तजार करते हैं। शादी-ब्याह में गाड़ी, शामियाना, बत्ती-बाजे आदि की बुकिंग भी अब फोन से होने लगी है। डाक्टरों से भी फोन पर सम्पर्क होने लगा है।

सबसे सुखद अनुभूति महिलाओं को हुई है। खासकर पर्दे में रहने वाली महिलाओं को, जो आसपास के गांवों में रहने वाली बेटी-बहुओं से कोई सम्पर्क नहीं कर पाती थीं। अब वे फोन से लम्बी बातें करनी लगी हैं। अब वे उस दिन का इन्तजार कर रही हैं जबकि दिल्ली, बम्बई, न्यूयार्क, टोरेन्टों और पोर्टलूई (मारीशस) में बसे अपने संबंधियों से बात करेंगी। सचमुच यह उनके लिये अत्यंत सुख और आनंद का दिन होगा। उन्हें इस सुख की प्राप्ति न हुई होती, यदि सरकार ने गांवों तक विज्ञान और प्रौद्योगिकी का सुख पहुंचाने का संकल्प नहीं लिया होता।

भारत की दो-तिहाई आबादी गांवों में रहती है। इसलिए प्रथम पंचवर्षीय योजना काल से गांवों के विकास को प्राथमिकता दी जा रही है। वहां शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं, परिवार कल्याण, सफाई, परिवहन के साथ-साथ संचार साधनों का विस्तार किया जा रहा है। धीरे-धीरे गांवों में उन सभी साधनों को सुलभ-करवाया जा रहा है, जो कि पहले गांव वालों के लिए स्वप्न मात्र थे।

आज असंख्य ग्रामवासी शहरों के भौतिक सुखों से आकर्षित होकर नगरवासी हो गये हैं। अधिकांश रोजी-रोटी की खोज में शहरों में पहुंच गए हैं। कुछ विदेशों में भी बस गए। इन परदेसियों को गांवों में रहने वाले अपने परिजनों से सीधा सम्पर्क बनाने का सौभाग्य प्राप्त होगा।

पहले पहल राजीव गांधी सरकार ने गांवों के टेलीफोन से जोड़ने की योजना स्वीकार की तथा संचार विकास के लिए टेक्नोलाजी मिशन की स्थापना की। उस मिशन ने दूर संचार के क्षेत्र में करिश्मा कर दिखाया। मिशन के प्रताप से अब वह दिन दूर नहीं जब कि देश के सभी गांवों में टेलीफोन लग जाएंगे। तब वह महज शोभा की वस्तु नहीं होगी, बल्कि उसका व्यापक इस्तेमाल होगा।

सौर ऊर्जा से चालित टेलीफोन

गांवों को टेलीफोन से जोड़ने के लिए सस्ती टेक्नोलाजी भी प्राप्त हो गई है। इसके तहत अब सभी गांवों को सौर-ऊर्जा से चालित टेलीफोन से जोड़ा जा रहा है। इस कार्यक्रम के लागू होने के बाद महानगरों में रहने वाले ग्रामीणों को भी अपने गांव से सम्पर्क बनाने की सुविधा मिलेगी ही। इस प्रकार गांवों व शहरों के बीच की भौगोलिक दूरी दूर-संचार की सेवाओं से कम हो गई है। शहरों के उद्योगपतियों और व्यापारियों को भी अपनी चीजों को बाजार से गांवों तक फैलाने में मदद मिलेगी।

हम सभी जानते हैं कि पंजाब के प्रत्येक गांव का एक न एक बेटा या बेटी विदेश में है। इन्हें अपने परिवार के सदस्यों से बातें करने में सुख की जो अनुभूति होगी, इसकी कल्पना की जा सकती है। कोई न कोई व्यक्ति या परिवार, महानगरों और बड़े शहरों में कार्यरत हैं। सरकारी सेवाओं में लगे लोग भी देश-विदेश के विभिन्न भागों में फैले हैं। उन्हें अपने गांव से सीधा सम्पर्क करने की सुविधा मिलेगी।

सरकार को भी अब सुदूर गांवों से दैनिक सम्पर्क बनाने की नौबत आ गई है। उग्रवादियों द्वारा आक्रांत इलाकों में या घोर

जंगलों में संचार सुविधा सुलभ होने से पुलिस को वहां से तुरंत या तत्काल सूचना मंगाने में मदद मिलती है। जल-संसाधन विभाग को बाढ़ के स्तर की सूचना मिलती है। प्राकृतिक आपदाओं से निबटने में, सीमाओं पर घुसपैठियों, तस्करों और विदेशी दलालों की गतिविधियों पर नजर रखने में भी, सरकार को गांवों में स्थित सार्वजनिक तार टेलीफोन केन्द्रों से सहायता मिलती है।

राष्ट्रीय दूर संचार नीति

केन्द्र सरकार ने एक राष्ट्रीय दूरसंचार नीति की घोषणा की है जिसके अनुसार टेलीफोन चाहने वाले देश के सभी नागरिकों को पहली अप्रैल 1997 तक टेलीफोन सुलभ करने का संकल्प लिया है। इसके अन्तर्गत देश के 5,03,594 गांवों को टेलीफोन से जोड़ने की महत्वाकांक्षी योजना शामिल है। इसके पहले सरकार सभी ग्राम पंचायतों में सार्वजनिक टेलीफोन लगाना चाहती थी। किन्तु अब सभी गांवों को सौर ऊर्जा से चालित टेलीफोन से जोड़ने का कार्यक्रम है। इस वर्ष अप्रैल तक इस कार्यक्रम के तहत 1,42,552 गांवों में सार्वजनिक टेलीफोन लगा दिए गए थे। 1994-95 में 1,05,883 गांवों में टेलीफोन उपलब्ध कराने का सरकार ने लक्ष्य रखा है। इसके बाद 2,48,435 गांवों को टेलीफोन सुविधा दी जाएगी। शेष 3,55,169 गांवों को 1997 तक टेलीफोन से जोड़ने का प्रस्ताव है। इसका अर्थ यह हुआ कि सरकार प्रतिदिन पांच सौ गांवों को टेलीफोन से जोड़ने का प्रयास करेगी।

इस में गांव के लोगों को भी सरकार से सहयोग करना होगा। सर्वप्रथम उन्हें फोन लगाने के लिए स्थान उपलब्ध कराना होगा तथा टेलीफोन के रखरखाव की जिम्मेदारी लेनी होगी। उसे अपनी चीज समझकर उसकी रक्षा करनी होगी। अक्सर यह पाया जाता है कि लोग तार काट लेते हैं, खम्भे उखाड़ लेते हैं, फोन उपकरण उठा ले जाते हैं। विकास कार्यक्रमों के इन शत्रुओं पर समाज को कड़ी नजर रखनी चाहिए।

इसी तरह, ग्रामवासियों को ईमानदारी के साथ ग्रामीण विकास की अन्य योजनाओं में भी सहयोग करना चाहिए तभी भारत के गांव भी अमरीका और ब्रिटेन जैसे हो पाएंगे। उसके बाद गांवों से शहरों की ओर पलायन बंद होगा।

बी-2 बी/285,
जनकपुरी, नई दिल्ली,
पिन कोड-110058

जन्मदर और शिशु मृत्युदर में उल्लेखनीय कमी

जन्मदर और शिशु मृत्युदर के वर्ष 1993 के आंकड़ों में 1992 के आंकड़ों की तुलना में काफी कमी आई है। जन्मदर 29.2 से घटकर 28.5 रह गई है तथा शिशु मृत्युदर 79 से घटकर 74 रह गई है। यह जानकारी केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्री, श्री बी. शंकरानन्द ने नई दिल्ली में अपने मंत्रालय से संबंद्ध संसदीय सलाहकार समिति की एक बैठक में दी।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

जनसंख्या विस्फोट, विकास का अवरोध

✍ वेद प्रकाश अरोड़ा

आज समग्र विश्व में जनसंख्या में बेतहाशा और बेतरतीब वृद्धि से स्थिति इतनी विकट हो गई है कि अविकसित, अर्द्ध विकसित और विकासशील देशों में ही नहीं, विकसित और औद्योगिक दृष्टि से समुन्नत देशों में भी सरकारी प्रयासों के बावजूद अधिसंख्य लोगों को छतछप्पर, दवादारू और शिक्षा की यथेष्ट सुविधाएं नहीं मिल पा रहीं हैं। सामाजिक आर्थिक और अन्य क्षेत्रों में सरकारी और गैर सरकारी संगठन जो कार्य निष्पादित करते हैं और उपलब्धियां हासिल करते हैं, उन सब पर जनसंख्या का बढ़ता अभिशप्त साया पानी फेर देता है। जनसंख्या विस्फोट गांवों को ही नहीं नगरों को भी नरक बनाकर नए-नए रोगों को जन्म दे रहा है। विश्व बैंक की रिपोर्ट ने भी इसी अप्रिय तथ्य की इन शब्दों से पुष्टि की है कि विकास की उपलब्धियां तभी सार्थक और स्थायी बन सकती हैं जब जनसंख्या नियंत्रण कार्यो को अपेक्षित सफलता प्राप्त हो। काहिरा में इस वर्ष पांच सितंबर से 13 सितंबर तक नौ दिन के लिए आयोजित जनसंख्या और विकास संबंधी संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में भी लगभग सभी सम्मिलित 180 देशों के प्रतिनिधियों ने जनसंख्या पर रोक और निरंतर आर्थिक विकास के बीच चोली दामन के अटूट संबंध को उजागर किया। जनसंख्या पर विचार के लिए यह तीसरा बड़ा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन था। इससे पहले 1984 में मैक्सिको शहर में तथा 1974 में बुखारेस्ट में ऐसे जनसंख्या सम्मेलन हुए थे। काहिरा सम्मेलन विश्व की आबादी सन् 2050 तक लगभग दुगनी यानी 10 अरब होने से रोकने की कार्य योजना तैयार करने के लिए बुलाया गया था। उसने आबादी बढ़ने से रोकने के लिए लगभग 110 पृष्ठों का जो कार्यक्रम स्वीकृत किया उसमें परिवार परिसीमन के लिए गर्भपात और विशेष रूप से अरक्षित गर्भपात को निरुत्साहित करते हुए 1995 से 2015 तक की अवधि के लिए कुछ मार्गनिर्देश दिए गए हैं, जिनका संबंध शिक्षा, विशेष रूप से लड़कियों की शिक्षा, मृत्युदर में कमी, परिवार परिसीमा संबंधी सूचना और सेवाओं सहित पुनर्प्रजनन स्वास्थ्य इन तीन क्षेत्रों से है। सम्मेलन में कार्य-योजना पर हुई व्यापक सहमति में परिवार-नियोजन की सुविधाएं विश्व भर में सुलभ कराने पर जोर दिया गया। कार्य योजना में महिलाओं को अपने संबंध में स्वयं निर्णय करने तथा सभी स्तरों पर बराबर के अधिकार देने का आह्वान किया गया है। सम्मेलन की सिफारिशें बाध्यकारी न होते हुए भी संयुक्त राष्ट्र उन्हें लागू किए जाने के काम पर नज़र रखेगा।

संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव बुतरस बुतरस घाली ने इस सम्मेलन में अपने उद्‌घाटन भाषण में बताया कि इस समय विश्व की जनसंख्या पांच अरब 63 करोड़ है। प्रत्येक वर्ष इसमें लगभग नौ करोड़ की वृद्धि हो जाती है। अगर जनसंख्या वृद्धि की यही गति बनी रही तो सन् 2050 तक विश्व की आबादी 7 अरब 19 करोड़ से लेकर साढ़े ग्यारह अरब के बीच हो जायेगी। इस वृद्धि का सबसे दुखद पहलू यह है कि आबादी में अधिकांश वृद्धि विश्व के सबसे गरीब देशों में हो रही है। इस समय साढ़े चार अरब व्यक्ति अर्थात कुल आबादी का 80 प्रतिशत विश्व के सबसे कम विकसित देशों में रहते हैं।

यहां यह प्रश्न उठता है कि जब प्रति दिन तीन लाख 77 हजार नए बच्चे इस धरती के निवासियों से आ जुड़ते हों, तब सामाजिक विकास की निरंतर बढ़ती मांग कैसे पूरी हो सकती है। यह कैसी विडंबना है कि भरसक प्रयासों और व्यापक योजनाओं के बावजूद तीसरी दुनिया के देश एक तरफ सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में विकास की दौड़ में पिछड़ते जा रहे हैं तो दूसरी तरफ वे आबादी में वृद्धि के प्रतिशत में निरंतर आगे बढ़ते चले जा रहे हैं। इस विकट स्थिति में लक्ष्यों तथा उपलब्ध आर्थिक साधनों के बीच तथा जनाकांक्षाओं और उपलब्ध अवसरों के बीच खाई का निरंतर बढ़ते जाना स्वाभाविक है। दोनों के संबंधों में विपरीतगामिता की स्थिति एक गंभीर चेतावनी और एक अपशगुन है। अपशगुन इसलिए कि आबादी के बढ़ने का प्रभाव और दबाव मूलतः रोजगार, काम धंधों, कृषि उपज और वितरण, शिक्षा, चिकित्सा, प्रदूषण और आर्थिक स्थिति पर पड़ता है। जीने के लिए रोटी, कपड़ा और मकान की बुनियादी जरूरतें पूरी न होने पर ज़िंदगी एक अंतहीन डरावनी काली रात बन जाती है। हर नया बच्चा, एक अभिशाप सा बन जाता है। इस सबका असर मानव-चरित्र और उसके व्यक्तित्व, परिवार, समाज और अंततः राष्ट्र और यहां तक की पर्यावरण और प्रकृति पर भी पड़ता है। जहां तक समाज एवं राष्ट्र का संबंध है संख्या में दिनोंदिन बढ़ते हाथों को काम न मिलने या आधा रोजगार मिलने की स्थिति उग्रवाद को हवा देने का कारण बन जाती है। बेरोजगारों की बढ़ती फौज़ और

उसका निरंतर बढ़ता असंतोष और आक्रोश कई सरकारों को झुलसा कर या फिर उनके तख्ते उलट कर रख देता है। किसी समाज और देश में जनाक्रोश को तो कभी-कभी सख्ती बरतने से दबाया जा सकता है, लेकिन प्रकृति पर किसी का कोई नियंत्रण नहीं। बढ़ती आबादी के साथ बढ़ते प्रदूषण और गंदगी से प्लेग जैसी महामारी उत्पन्न कर प्रकृति बदला लेने पर उतारू हो जाती है। वह पृथ्वी का बोझ हल्का करने, आबादी और धरती के बीच असंतुलन दूर करने तथा ऋतुचक्र में पड़े व्यवधान को दूर करने के लिए कहीं सूखे और बाढ़, तो कहीं बवंडर और समुद्री तूफान, तो कहीं महामारी और भूकंप, तो कहीं अल्पवृष्टि और अति वृष्टि जैसी आपदाओं को, तो कहीं युद्धों को भी जन्म दे डालती है। इंद्रदेव की वक्र दृष्टि या प्राकृतिक आपदाओं के विकराल जबड़े दिखाने से लाशों के ढेर लग जाते हैं और दूर-दूर तक बस्तियों में जिंदगी का कोई नामोनिशान तक नहीं रहता। तब मृत्यु दर का हिसाब किताब रखने वाला भी कोई दिखाई नहीं देता।

प्रकृति का प्रकोप हो ही न और जनसंख्या लक्ष्मण रेखा को पार न कर पाए—इसके दो ही रास्ते हैं। एक नरम यानी समझाने बुझाने का रास्ता और दूसरा कठोर यानी इमरजेंसी लगाने जैसा रास्ता। दूसरा रास्ता एक बार अपनाया जा चुका है और कड़वी यादों के कारण उसे दोहराना ठीक नहीं समझा जाता। इसीलिए नरम रास्ते के जरिए लोगों का जीवन स्तर ऊंचा उठा कर जन्मदर को नियंत्रित करना श्रेयस्कर समझा जाता है। यह स्तर तभी ऊपर उठ सकता है जब परिवार में पति-पत्नी के अलावा एक दो बच्चे ही हों। चीन में 'एक परिवार एक बच्चे' के सिद्धांत को मूर्त रूप दिया जा रहा है। सुख समृद्धि के विस्तार के लिए स्वैच्छिक संतति निरोध को सबसे प्रभावशाली साधन और अस्त्र समझा जाता है।

देश में सम्पन्नता की क्रीमी लेयर आबादी के पांच से 15 प्रतिशत तक ही है। असली सफलता तभी मिलेगी जब बाकी 80 से 90 प्रतिशत की आबादी की आर्थिक स्थिति में भी सुधार हो। इसी विशाल निर्धन तबके के लिए साधनों और विकास के बीच बढ़ती खाई बार-बार खतरे की घंटी देती रहती है। यह मानव विवेक, मानव शक्ति, उसकी आविष्कार प्रतिभा तथा अपार क्षमता को ललकारते हुए उसके सही, सामयिक और सटीक उपयोग के लिए अवसर, संभावनाएं और विशाल क्षेत्र भी प्रदान करती है।

भारत में प्रयास

जनसंख्या वृद्धि के मामले में भारत अपवाद कैसे हो सकता है। 1901 में भारत की जनसंख्या 23 करोड़ 83 लाख आंकी गई थी। 1951 में आबादी बढ़कर 36 करोड़ 11 लाख हो गई जो 1991 तक के 40 वर्षों में बढ़कर 84 करोड़ 63 लाख यानी दुगनी से भी अधिक हो गई। 1994 के अंत तक देश की कुल जनसंख्या के 90 करोड़ हो जाने की सम्भावना है। अर्थात् विश्व का हर छठा व्यक्ति भारतीय होगा। यहां विश्व की कुल जनसंख्या के 16 प्रतिशत से अधिक लोग रहते हैं, जबकि विश्व के कुल क्षेत्र का मात्र 2.4 प्रतिशत ही हमारे पास है। भारत की जनसंख्या में प्रतिवर्ष लगभग एक करोड़ 70 लाख की वृद्धि हो रही है। आबादी की वृद्धि दर में तेजी पिछले दशकों में आई है। 1941-51 में यह दर 1.25 प्रतिशत तथा 1901 में मात्र 0.30 प्रतिशत थी। वृद्धि दर में उछाल 1951 के बाद अधिक देखने में आया। 1971-81 के दशक में तो यह दर 2.22 प्रतिशत तक पहुंच गई। लेकिन अगले दशक 1981-91 में यह घटकर 2.14 प्रतिशत रह गई। अगर इस अवधि में परिवार कल्याण कार्यक्रम को आगे न बढ़ाया जाता तो जनसंख्या वृद्धि दर 2.71 प्रतिशत होती। इस समय यह वृद्धि दर लगभग 2.1 प्रतिशत वार्षिक है। देश में जनसंख्या बढ़ने पर अंकुश लगाने के लिए सरकारी नीतियों के अंतर्गत सन् 2050 तक जनसंख्या वृद्धि दर शून्य कर देने का लक्ष्य रखा गया है। लेकिन तब तक देश की आबादी लगभग एक अरब 30 करोड़ हो चुकी होगी। यह सब तब होगा जब सरकारी और स्वयंसेवी संगठनों के प्रयत्नों और जनसंचार माध्यमों के प्रचार-प्रसार के परिणामस्वरूप 1951 से 1991 तक के 40 वर्षों में जन्मदर प्रति हजार 41.7 से घटकर 32.5 रह गई।

वार्षिक रिपोर्ट

स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय की 1993-94 की वार्षिक रिपोर्ट में बताया गया है कि पिछले वर्ष 1992-93 की तुलना में परिवार परिसीमन के तौर-तरीके अपनाने वाले लोगों की संख्या 16.6 प्रतिशत बढ़ गई। अगले वर्ष 1993-94 में परिवार कल्याण कार्यक्रम के लिए 12 अरब 70 करोड़ रुपये निर्धारित किए गए है। इस कार्यक्रम कें परिणामस्वरूप कुल गर्भधारण की दर 5.97 से कम होकर 3.8 तथा दम्पति संरक्षण दर 10.4 प्रतिशत से बढ़कर 43.7 प्रतिशत हो गई। लेकिन जन्मदर में गिरावट का लाभ इसलिए दिखाई नहीं देता कि वह मृत्युदर की गिरावट से अब भी अधिक है। जब जन्मदर की औसत अधिक और मृत्युदर की औसत कम हो तो आबादी का सतत बढ़ते जाना कैसे रुक सकता है? परिवार कल्याण कार्यक्रम के अंतर्गत 90 ऐसे जिले

को परिणामपरक कार्य योजना के लिए चुना गया है जिनमें जन्मदर 30 प्रति हजार या इससे अधिक है। इनमें से 83 जिले उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार और राजस्थान में है। जनसंख्या वृद्धि पर चहुंमुखी प्रहार करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय जनसंख्या नीति तैयार करने के लिए एक समिति बनाई गई है जिसके अध्यक्ष एम. एस. स्वामीनाथन है। इस समय 15 राज्यों और दिल्ली में लगभग 12 अरब रुपये की लागत से 11 क्षेत्रीय परियोजनाएं लागू की जा रही हैं जिससे इन राज्यों में स्वास्थ्य और परिवार कल्याण के बुनियादी ढांचे को मजबूत बनाया जा सके। पिछले वर्ष अक्तूबर तक 13,630 उपकेन्द्र और प्रशिक्षण संस्थान खोले जा चुके थे। इसके अलावा 3 लाख 43 हजार चिकित्सा और अर्द्धचिकित्सा कर्मचारी प्रशिक्षित किए गए। इन क्षेत्र परियोजनाओं के लिए विश्व बैंक और संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कार्रवाई कोष आदि अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं वित्तीय सहायता प्रदान कर रही हैं।

असल में 1951 में पंचवर्षीय योजनाओं की मार्फत नियोजित विकास की प्रक्रिया आरंभ करने के साथ ही पहला सरकारी परिवार नियोजन कार्यक्रम शुरू कर दिया गया था। बाद में इसी कार्यक्रम का नाम बदल कर परिवार कल्याण कार्यक्रम रखा गया। इसका उद्देश्य जन्मदर को घटाकर जनसंख्या को ऐसे स्तर पर ला देना था जो राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था के अनुकूल हो। पहले इसके प्रति चिकित्सा से जुड़ा दृष्टिकोण, फिर विस्तार और शिक्षा से जुड़ा दृष्टिकोण तथा कैफटेरिया (अल्पाहार गृह) दृष्टिकोण अपनाया गया। 1976 में नीति विषयक बयान जारी कर इस कार्यक्रम को प्रदान की गई प्राथमिकता और जनसंख्या-समस्या के समाधान के प्रति वचनबद्धता की पुष्टि की गई। 1977 में जारी संशोधित बयान में परिवार कल्याण कार्यक्रम के स्वैच्छिक स्वरूप पर जोर दिया गया। नसबंदी, नल बंदी तथा कंडोम, लूप और गोलियों के प्रयोग को स्वैच्छिक आधार पर प्रोत्साहित किया जाता है। अस्पतालों, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों और उपकेंद्रों में ये सब सेवाएं निःशुल्क प्रदान की जाती हैं। सामाजिक विपणन योजना के अंतर्गत गोलियां और कंडोम कम मूल्य पर दिये जाते हैं। देश के अंदर अनुसंधान के बाद सेंट क्रोमन नाम की एक नई गोली तैयार की गई है जिसे सप्ताह में एक बार लेने से बच्चा होने की कोई संभावना नहीं रहती। 1983 में घोषित राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में जनसंख्या के दीर्घकालीन लक्ष्य दिए गए हैं। इनके अनुसार सन् 2000 तक जन्मदर एक हजार पर 21, मृत्युदर एक हजार पर 9, और स्वाभाविक वृद्धिदर एक सौ पर 1.2 रखने का कार्यक्रम है। जहां तक शिशु मृत्यु दर का सवाल है इसे 60 प्रति हजार से भी नीचे ले आने की परिकल्पना की गई है। आबादी में बढ़ोत्तरी की दर घटाने के लिए अन्य अनेक महत्वपूर्ण कदम भी उठाए गए हैं। 1978 में बालविवाह नियंत्रण अधिनियम में संशोधन करके लड़कियों की विवाह की न्यूनतम आयु बढ़ाकर 18 और लड़कों की 21 वर्ष कर दी गई। महिलाओं को शिक्षा तथा उनके लिए आर्थिक अवसर प्रदान करने के प्रयत्नों से विवाह की औसत आयु बढ़ गई है। जनसंख्या में कमी लाने के अन्य अनेक प्रोत्साहनों के साथ-साथ निर्धारित दर से अधिक बच्चे पैदा करने पर कई निरुत्साहनों की भी व्यवस्था की गई है। सरकार को ऐसे दम्पत्तियों को अधिक प्रोत्साहन देने चाहिए जो अपने परिवार को एक दो बच्चों तक सीमित रखते हैं। ऐसे दम्पतियों को निःशुल्क सुविधाएं और सहायता प्रदान करनी चाहिए। इसमें बच्चों की शिक्षा, नौकरी की सुरक्षा, आवास की व्यवस्था तथा चिकित्सा की सुविधाएं आदि शामिल की जा सकती हैं।

कठिनाइयां

यह बात निश्चित है कि परिवार परिसीमन की समस्या को अन्य समस्याओं से अलग रख कर हल नहीं किया जा सकता। साक्षरता, समाज सुधार, बेरोजगारी और लड़कियों की शिक्षा जैसी समस्याओं को जनसंख्या वृद्धि से अलग करना और फिर उस पर अलग विचार करना गलत है। परिवार परिसीमन का कार्य आगे बढ़ाने के लिए यह तथ्य संबद्ध अधिकारियों के गले काफी समय बाद उतरा। परिवार की खुशहाली के एक अंग के रूप में अगर यह काम पहले हाथ में ले लिया जाता तो छोटे तथा सुखी परिवार की बदौलत इस कार्यक्रम का लाभ राष्ट्र को काफी अर्सा पहले मिल जाता। यहां यह बात उल्लेखनीय है कि जनसंख्या बढ़ने से रोकने में अपेक्षित सफलता न मिलने का कारण यह है कि हमारा देश कोई अधिनायकवादी देश नहीं, जिसमें प्रत्येक काम डंडे के जोर से किया जाता हो तथा विरोधियों को जेल में ठूंस दिया जाता हो। लोकतंत्र होने के नाते यहां सारा काम समझा बुझाकर किया जाता है। परिवार परिसीमन के प्रति जागरूकता पैदा कर और इस काम के लिए इलैक्ट्रानिक माध्यमों तथा समाचारपत्रों की सहायता लेकर जनसंख्या पर अंकुश लगाने का प्रयास किया जाता है। यह कार्यक्रम लोकोन्मुखी होने के कारण इसमें स्वयंसेवी संगठनों और लोगों की भागीदारी अत्यावश्यक है। यह भागीदारी अभी अपेक्षित स्तर पर नहीं हो सकी है। इस कार्यक्रम को सिरे

चढ़ाने के लिए इसके प्रति उत्पन्न किए गए भ्रमों और गलतफहमियों को दूर करना निहायत जरूरी है। साथ ही यह कार्यक्रम तभी एक जनांदोलन बन सकता है जब समाज को रूढ़ियों, अंध विश्वासों, पोगापंथियों और कठमुल्लाओं के प्रभाव से मुक्त किया जाए। व्यापक जागरूकता पैदा करने के लिए महिलाओं और पुरुषों, विशेष रूप से महिलाओं में, साक्षरता का प्रसार अत्यावश्यक है। अगर महिलाएं निरंतर अधिक संख्या में शिक्षित होती चली जाएं तो संतति निरोध आंदोलन भी बराबर अधिक सफल होता चला जायेगा। जनसंख्या की जटिल समस्या केंद्र के लिए ही नहीं, राज्यों के लिए भी चिंता का विषय है और इस कार्यक्रम के प्रति राज्य सरकारों को जिला परिषदों, पंचायत समितियों और पंचायतों के जरिए जनता की साझेदारी को निर्धारित करना और उसका अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करना होगा।

268 सत्य निकेतन, मोती बाग,
नानकपुरा, नई दिल्ली-21

शेष पृष्ठ 2 का

में इतना विस्तृत विवरण संग्रहणीय लगा। पंचायती राज में महिलाओं की शक्ति संबंधित लेख ने विशेषतः प्रभावित किया।

उक्त लेख ने एक बार फिर समाज को महिला वर्ग की महत्ता से अवगत करवाया। प्रायः सभी पंचायतों में महिलाओं को उचित आरक्षण दिया गया है। यह खुशी की बात है किन्तु एक बात जो खलती है वह यह कि प्रशासनिक तौर पर तो इनको काफी अधिकार मिले हैं किन्तु अपने इन अधिकारों या उत्तरदायित्व का निर्वहन करने में महिलायें उतनी सजग नहीं दिख रही हैं।

मेरा मतलब यह नहीं कि महिलाओं को आरक्षण न मिले। समानता का अधिकार तो सबको है ही और महिलाएं समाज का वह महत्वपूर्ण अंग हैं जिसके अभाव में समाज की चाल पहिये विहीन गाड़ी के समान होगी। किन्तु इसके लिए महिलाओं को घर की चारदीवारी से बाहर निकल कर और थोड़ा सा जागरूक होकर संकीर्णता से विशालता के विचार की ओर ध्यान देना होगा तभी सदियों से उत्पीड़ित हो रही नारी जाति को मुक्ति मिलेगी और समाज को भी विकास की सही दिशा मिलेगी।

मनोज अग्रवाल,
एम.एस.सी (फाइनल वर्ष),
जाम गांव, जिला-रायगढ,
(मध्य प्रदेश)

(पृष्ठ 27 का शेष)

"हां, है क्यों नहीं?" उसने बेझिझक जवाब दिया।

सुनीता कुर्सी की पीठ से टिकी बैठी थी। पीठ को आगे करके सीधी बैठ गयी। मुस्कराई और बोली..."लेकिन मुझे यह रिश्ता पसन्द नहीं है। बुरा मत मानिएगा आप को हमसे अच्छे रिश्ते और भी ऊंची रकम के साथ मिल जाएंगे। मैं विवाह ऐसे व्यक्ति से करना चाहती हूं जिसके सपनों में देश और समाज का कोई स्थान हो।

नमस्कार में हाथ जोड़ती हुई सुनीता उठ गई। उधर से पापा आते दिखाई पड़े। युवक उनसे बिना कुछ बोले उठकर चला गया।

किवाड़ की ओट से लगी सुनीता की मां समझ नहीं सकी कि बेटी के व्यवहार से सुखी हो या दुखी पर अपने रक्त-प्रवाह से बजने वाली तालियों की वही गड़गड़ाहट उन्हें एक बार फिर सुनाई पड़ने लगी।

9, हीरापुरी कालोनी,
गोरखपुर विश्वविद्यालय,
गोरखपुर (उ० प्र०)

उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य शिक्षा का प्रसार

✍ सैयद सलमान हैदर

अक्सर यह देखा गया है, संसाधनों के रहते हुए , जानकारी के अभाव में उसका उपयोग नहीं हो पाता। स्वास्थ्य के मामले में भी यह बात सच साबित हुई है। मात्र जानकारी के अभाव में और स्वास्थ्य के प्रति जागरूक न रहने के कारण लोग कष्ट झेलते रहते हैं जबकि उन्हें होने वाली बीमारियों का कारण मामूली सा होता है जिसका समय से निदान न हो पाने के कारण लोग गम्भीर रोगों के शिकार हो जाते हैं।

अनेक दावों के बावजूद आज हमें यह स्वीकार करने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए कि गांवों में स्वास्थ्य सेवाएं समुचित रूप से उपलब्ध नहीं हैं। यदि दवाएं और चिकित्सा उपलब्ध भी हो, तो स्वास्थ्य सेवाओं का उद्देश्य यह नहीं होना चाहिए कि कोई रोग हो जाए और उसके बाद चिकित्सा सहायता उपलब्ध कराई जाए। होना तो यह चाहिए कि लोगों को रोगों से बचने के उपायों की जानकारी व्यापक रूप से दी जाए ताकि रोग हो ही नहीं। कुछेक अपवादों को छोड़ अनेक रोगों के मामले में ऐसा करना सम्भव है। ऐसा ही एक प्रयास राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान द्वारा उत्तर प्रदेश के उन्नीस जिलों में किया जा रहा है।

सरकार अपनी ओर से गांवों में चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध कराने का पूरा प्रयास करती है लेकिन अनेक कारणों से चिकित्सक गांवों में हर समय उपलब्ध नहीं हो पाते। गांवों में चिकित्सकों के रहन-सहन के उपयुक्त वातावरण, उनके बच्चों के लिए अच्छी शिक्षा, बिजली-पानी और दूसरी आधारभूत सुविधाओं के अभाव के कारण अक्सर चिकित्सक गांवों में स्थित अस्पतालों और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर मौजूद नहीं रहते। जब रोगों की समुचित सुविधा घर के पास उपलब्ध न हो तो, यह जरूरी हो जाता है कि रोगों से बचाव का तरीका लोगों को मालूम हो।

स्वच्छता से बीमारियों से बचाव संभव

चिकित्सा संबंधी शिक्षा का प्रसार न होने और अक्षर-ज्ञान न होने के कारण अक्सर गांव के लोग उन छोटी-मोटी बीमारियों के उपचार के लिए शहर की ओर भागते हैं, जिनका इलाज आसानी से और कम खर्च पर उनके आस-पास मौजूद संसाधनों से हो सकता है। अनेक ऐसी बीमारियां भी होती हैं, जो रहन-सहन की गलत आदतों से हो जाती हैं। उदाहरण के लिए पानी की स्वच्छता और उसे उबाल कर पीने से ही पेट की अनेक बीमारियां और जल-जनित अन्य बीमारियों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। अपने शरीर और आसपास की स्वच्छता पर ध्यान देकर अनेक बीमारियों से बचा जा सकता है। इसके अलावा जच्चा-बच्चा की देखभाल, बच्चों को निरोधक टीके लगाना, दूसरे प्राथमिक उपचार, जहरीले जन्तुओं के काटने पर किए जाने वाले चिकित्सा-पूर्व उपायों से सम्बन्धित विषयों पर जानकारी के व्यापक प्रसार की आवश्यकता है। इस बात को ध्यान में रखकर नई दिल्ली स्थित राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान ने अमरीका के सहयोग से एक परियोजना की शुरूआत की थी। इस परियोजना को सन्1988 में शुरू किया गया था और अमरीकी सहायता से इसे पांच वर्ष तक चलाया जाना था परन्तु 1993 में परियोजना की उल्लेखनीय सफलता को देखते हुए भारत सरकार ने इसे बिना बाहरी मदद के अनिश्चित काल तक चलाने का फैसला किया।

संस्थान के कार्यकलाप

नई दिल्ली स्थित यह संस्थान स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय की ऐसी सर्वोच्च तकनीकी संस्था है, जो मंत्रालय को तकनीकी और योजनागत मामलों पर सुझाव देती है। प्राथमिक चिकित्सा सुविधाओं के माध्यम से "सबके लिए स्वास्थ्य" का लक्ष्य प्राप्त करने की दिशा में यह संस्थान अग्रसर है। संस्थान अपनी गतिविधियों, शिक्षण एवं प्रशिक्षण शोध एवं मूल्यांकन, सुझाव और दूसरी विशिष्ट सेवाओं के लिए देश भर में जाना जाता है। संस्थान स्वास्थ्य शिक्षा, मानव शक्ति के विकास, अस्पताल और तत्संबंधी वस्तुओं, दवाओं आदि के प्रबन्ध और स्वास्थ्य सेवाओं की ढांचागत सुविधाओं के विकास की असीम संभावनाओं का पता लगाता है। इसके अलावा मातृ शिशु कल्याण, प्रजनन संबंधी दोषों को दूर करने, बच्चों की मृत्यु दर को कम करने और सामुदायिक स्वास्थ्य संबंधी सुझाव देने की दिशा में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। संस्थान के पास इन गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए प्रयोगशाला, क्लिनिक और लायब्रेरी है। इसके

अलावा आंकड़ों को इकट्ठा करने, उनके संसाधन और समय-समय पर उपयोग के लिए संस्थान का अपना एक कम्प्यूटर केन्द्र है।

सतत शिक्षा को ध्यान में रखते हुए, संस्थान कुछ स्वास्थ्य-शिक्षा संबंधी साहित्य भी प्रकाशित करता है। संस्थान के पास एक शिक्षण प्रखंड है, जहां प्रशिक्षुओं को प्रशिक्षण दिया जाता है। संस्थान की ओर से स्वास्थ्य संबंधी अनेक परियोजनाएं देश भर में चलाई जा रही हैं। संस्थान द्वारा उत्तर प्रदेश के उन्नीस जिलों में चलायी जा रही योजना का लक्ष्य प्रत्येक गांव में ऐसा वातावरण तैयार करना है, जिससे लोग न सिर्फ अपने स्वास्थ्य के बारे में जागरूक हों, बल्कि समुचित चिकित्सा या जानकारी के अभाव में होने वाली मौतों को भी रोका जा सके। विशेषकर नवजात शिशुओं की मृत्युदर को कम करने की दिशा में भी जागरूकता लाने का प्रयास किया जा रहा है। 'सूचना, शिक्षा एवं संचार' (इन्फार्मेशन एजूकेशन एंड कम्यूनिकेशन) के नाम से जानी जाने वाली इस परियोजना के अन्तर्गत स्वास्थ्य से जुड़े जिला स्तर के अधिकारियों से समन्वय स्थापित कर गांवों में स्वास्थ्य-शिक्षा के प्रसार और स्थानीय लोगों को स्वास्थ्य संबंधी प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जाती है। इसके तहत गांव के परिवारों में से ही एक ऐसे व्यक्ति की सम्पर्क सूत्र के रूप में पहचान की जाती है, जिसे स्वास्थ्य संबंधी प्रशिक्षण दिया जा सके। चूंकि यह व्यक्ति गांव के लोगों के बीच का होता है, इसलिए स्थानीय लोग उस पर सहज विश्वास करते हैं और उसके द्वारा बताई गई बातों पर अमल करते हैं।

इन सबके अलावा स्वास्थ्य सेवा से संबंधित अधिकारियों के आने की समय-सारिणी तय करके इसकी सूचना गांव वालों को दी जाती है, ताकि ग्रामीण अपनी स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का निराकरण करा सकें। इस कार्यक्रम के माध्यम से प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और अन्य अस्पतालों में उपलब्ध संसाधनों और मानव शक्ति से बेहतर काम लेने और उनकी कार्यक्षमता बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है। परियोजना उत्तर प्रदेश के जिन उन्नीस जिलों में चलायी जा रही है, उनके नाम हैं लखनऊ, हरदोई, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, लखीमपुर खीरी, मेरठ, बुलन्दशहर, सहारनपुर, ललितपुर, सुलतानपुर, बस्ती, गोण्डा, अलीगढ़, बंदायू, रामपुर, मुरादाबाद, बिजनौर और इलाहाबाद।

महिलाओं की कार्यक्रमों में विशेष रुचि

इस परियोजना के मूल्यांकन से पता चलता है कि उपलब्ध संसाधनों से ग्रामीणों को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध करायी जा सकती हैं। परियोजना गांवों में रहने वाले लोगों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता लाने और इन कार्यक्रमों में ग्रामीणों की हिस्सेदारी बढ़ाने में पर्याप्त रूप से सफल रही है। परियोजना के प्रति ग्रामीण महिलाओं ने विशेष रूप से रुचि दिखायी और कार्यक्रमों में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। पहली बार उन्हें लगा कि स्वास्थ्यकर्मी बराबर उनसे सम्पर्क रखते हैं और उनकी समस्याओं के समाधान के लिए तत्पर हैं।

परियोजना के कारण ही अब दूर-दराज गांवों में स्थित प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में स्वास्थ्यकर्मी अपने कामों में रुचि लेने लगे हैं और परियोजना के अन्तर्गत आने वाले जिलों में डाक्टर ग्रामीण क्षेत्रों में उपस्थित होने लगे हैं। इससे ग्रामीणों में चिकित्सा कर्मियों के प्रति विश्वास जागृत हुआ है।

परियोजना के प्रति राज्य सरकार ने भी गहरी रुचि दिखायी है और अपने जिला स्तरीय मुख्य चिकित्सा अधिकारियों, स्वास्थ्य-शिक्षा प्रसार अधिकारियों तथा अन्य पैरा मेडिकल स्टाफ के माध्यम से चिकित्सा सेवाओं को पुष्ट करने के निर्देश दिए हैं। बड़े पैमाने पर स्वास्थ्य-शिक्षा संबंधी प्रचार साहित्य भी इन क्षेत्रों में वितरित किया गया है। रक्षक टीकों, जच्चा-बच्चा कार्ड वितरण और टीकाकरण मेलों के आयोजन में जहां तेजी आयी है वहीं ग्रामीणों के मस्तिष्क पर पड़ी अंधविश्वास की परत भी हल्की होने लगी है। लोग अब बीमारियां होने पर झाड़-फूंक का सहारा लेने के बजाय चिकित्सा उपाय करने लगे हैं।

ए-14/20, भारद्वाजी टोला,
वाराणसी-221001

खादी और ग्रामोद्योग : विकास की विशाल क्षमता से परिपूर्ण

खादी और ग्राम उद्योग ने ग्रामीण क्षेत्रों में आय और रोजगार का सृजन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ये कम पूंजी से रोजगार के विशाल अवसर, स्थानीय साधनों और जनशक्ति के उपयोग, स्थानीय बाजार का लाभ तथा समाज के साधन विहीन वर्ग के व्यक्तियों को रोजगार दिलाने की अनोखी क्षमता रखते हैं।

महात्मा गांधी विकेन्द्रित आर्थिक विकास के जरिए गांवों को स्वावलम्बी बनाने की इनकी क्षमता को समझते थे। इसलिए उन्होंने स्वाधीनता आंदोलन के दौरान इन्हें अपने रचनात्मक कार्यक्रम का एक अंग बना लिया था। इस महान आंदोलन से चोटी के बहुत से नेता जुड़े हुए थे।

स्वाधीनता प्राप्ति से पहले खादी और ग्रामोद्योगों का विकास गांधी जी के प्रेरक निर्देशन में पूरी तरह एक गैर सरकारी प्रयास था। स्वाधीनता मिलने के बाद भारत सरकार ने खादी और ग्रामोद्योगों का विकास पंचवर्षीय योजनाओं के दायरे में करने का निर्णय लिया। भारत सरकार ने एक खादी और ग्रामोद्योग आयोग बनाया जो संसद के अधिनियम के अंतर्गत एक कानूनी संस्था है। राज्यों में भी खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड बनाए गए हैं। ये बोर्ड खादी और ग्रामोद्योगों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये संगठन इन उद्योगों को संस्थागत, बुनियादी और वित्तीय समर्थन देने का दायित्व निभाते हैं।

रोजगार में छह गुना वृद्धि

इन प्रयत्नों के सकारात्मक परिणाम निकले हैं। 1955-56 में 16 करोड़ 48 लाख रुपये का उत्पादन हुआ जो 1993-94 में बढ़कर 35 अरब रुपये हो गया है। 1955-56 में 9.64 लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला था। यह संख्या 1993-94 में बढ़कर 55.5 लाख हो गई है। 1955-56 में केवल दो राज्यों में खादी और ग्राम उद्योग बोर्ड तथा 242 पंजीकृत संस्थान थे। अब राज्य खादी और ग्रामोद्योगों बोर्डों की संख्या बढ़कर 30 हो गई है। इसके अलावा देश के दो 2,30,000 गांवों में 3500 पंजीकृत संस्थान, 29,813 सहकारी समितियां, 170 विभागीय इकाइयां और 13,000 बिक्री की दुकानें काम कर रही हैं।

फिर भी इस क्षेत्र में विकास की अभी बहुत संभावनाएं हैं। इन उद्योगों को गैर कृषि क्षेत्र में रोजगार के अवसर जुटाने तथा गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। नये आर्थिक वातावरण में खादी और ग्राम उद्योगों की भूमिका निर्धारित करनी होगी। इन व्यापक उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए एक उच्चाधिकार समिति बनाई गई थी। समिति की रिपोर्ट को अब अंतिम रूप दिया जा चुका है। रिपोर्ट में जिन मामलों पर जोर दिया गया है, उनका संबंध निर्यात बढ़ाने, बेहतर माल तैयार करने और उत्पादों की उन्नत प्रौद्योगिकी से है। इन सिफारिशों को लागू करने की मुख्य जिम्मेदारी इस क्षेत्र के विकास में संलग्न संस्थानों की है। इन संस्थानों को इस चुनौती का समाना करना होगा जिससे यह क्षेत्र, ग्रामीण विकास को बढ़ावा देने, रोजगार पैदा करने और ग्रामीण निर्धनता कम करने में अग्रणी कार्य कर सके।

कार्य योजना

कार्य योजना में समिति की एक मूल सिफारिश शामिल की गई है कि आठवीं पंचवर्षीय योजना के बाकी वर्षों में खादी और ग्रामोद्योगों में रोजगार के 20 लाख नए अवसर पैदा किए जायेंगे।

ऐसे समय जब राष्ट्र महात्मा गांधी की 125वीं जयंती मना रहा है, खादी और ग्रामोद्योग आयोग ने देश में खादी और ग्रामीण उद्योगों के तेज विकास के लिए देश के 125 खंडों को अपना लेने का फैसला किया है। कार्यक्रमों का उद्देश्य तीन वर्षों के दौरान खादी और ग्रामोद्योगों के जरिए प्रत्येक खंड में लगभग रोजगार के एक हजार अवसरों का सृजन करना है। इसके लिए जिला ग्रामीण विकास एजेंसी के अंतर्गत खादी और ग्रामोद्योग आयोग अनुदान तथा बैंक वित्तीय सहायता देंगे। परियोजना को खादी और ग्रामोद्योग संस्थान लागू करेंगे और सरकार परियोजना को मूर्तरूप देने के लिए सभी प्रकार का समर्थन प्रदान करेगी।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

मध्य प्रदेश के मंदसौर जिले के 44 गांवों में महिला समृद्धि योजना पूरी तरह से लागू

मध्य प्रदेश में मंदसौर जिले के 44 गांवों में हाल ही में शुरू की गई महिला समृद्धि योजना पूरी तरह से लागू हो गई है। इन गांवों में सभी ग्रामीण महिलाओं ने इस योजना के अंतर्गत खाते खोले हैं। इन गांवों को 'बचत गांव' घोषित किया गया है।

केरल में भी पलाक्कड, जिले में इस योजना को शत-प्रतिशत रूप से लागू करने के लिए एक अभियान शुरू किया गया है। इस अभियान का उद्देश्य प्रत्येक परिवार से कम से कम एक महिला को इस योजना के अंतर्गत नामांकित कराना है। इस कार्यक्रम को जिले की केरलानेरी पंचायत से शुरू किया गया है। इसकी सफलता को देखते हुए, एक संपूर्ण खंड, अलाथुर में भी महिला समृद्धि योजना को पूर्ण रूप से अमल में लाने के लिए एक अभियान शुरू किया गया है।

सरकार के प्रोत्साहन से ग्रामीण महिलाओं को अपने स्वयं के खाते खोलने के लिए प्रेरित कर उनमें बचत की आदत डालने के लिए पिछले वर्ष अक्टूबर में प्रारंभ की गई महिला समृद्धि योजना की प्रगति उत्साहवर्धक है। अभी तक लगभग 45 लाख महिलाओं ने महिला समृद्धि योजना खाते खोले हैं। पिछले माह में ही 20 लाख 50 हजार महिलाओं ने खाते खोले। अभी तक 37 करोड़ 85 लाख रुपये की राशि जमा की गई है, जिसमें से 3 करोड़ 36 लाख रुपये आदिवासी क्षेत्रों में जमा हुए हैं।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

डाक-तार पंजीकरण संख्या : (डी (डी एल) 12057/94
पूर्व भुगतान के बिना डी. पी. एस. ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

P & T Regd. No. D (DL) 12057/
Licenced under U (DN)-
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-

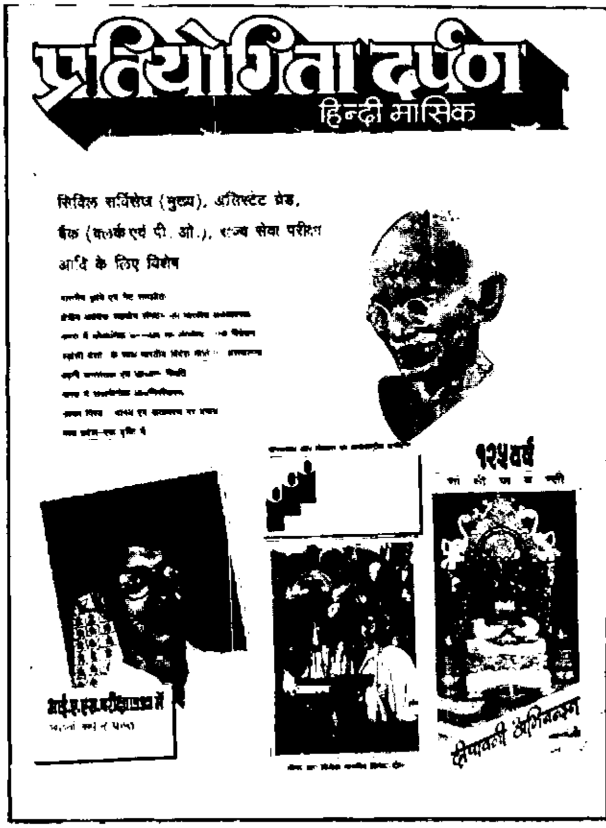

नवम्बर 1994 अंक

हिन्दी की सर्वाधिक बिकने वाली सामान्य ज्ञान पत्रिका

संघ एवं राज्य लोक सेवा आयोग की
सिविल सेवा परीक्षाओं (प्रारम्भिक तथा मुख्य) के
सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र की बेहतर तैयारी
के लिए प्रस्तुत हैं – पांच अतिरिक्तांक

परीक्षोपयोगी सीरीज	1	भारतीय अर्थव्यवस्था	मूल्य – रू
परीक्षोपयोगी सीरीज	2	भूगोल–भारत एवं विश्व	मूल्य – रू.
परीक्षोपयोगी सीरीज	3	भारतीय इतिहास	मूल्य – रू.
परीक्षोपयोगी सीरीज	4	भारतीय राजव्यवस्था	मूल्य – रू.
परीक्षोपयोगी सीरीज	5	भारतीय कला एवं संस्कृति	मूल्य – रू.

सिविल सेवा परीक्षा
की तैयारी के लिए महत्वपूर्ण उपयोगी सामग्री
आपकी जरूरत के अनुसार क्योंकि वर्षो के अनुभव से हम जानते हैं कि कब आपको क्या चाहिये

आज ही अपने निकटतम पुस्तक विक्रेता से खरीदें या पूरा मूल्य निम्न पते पर भेज कर प्राप्त करें